RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18/2025-27

तारतम मंजरी

वर्ष १० अंक ११ नवम्बर २०२५ बुद्धजी शाका ३४७ विक्रम सवंत् २०८२ पृष्ठ संख्या ३२

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड़, सरसावा, जिला सहारनपुर-247232 (उ.प्र)

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ की स्थापना वर्ष 2005 में सरसावा, जिला सहारनपुर (उत्तर प्रदेश) में श्री राजन स्वामी जी द्वारा की गई थी। इसका प्रमुख उद्देश्य ज्ञान, शिक्षा, उच्च आदर्श, पावन चरित्र व भारतीय संस्कृति का समाज में प्रचार करना तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित आध्यात्मिक मूल्यों द्वारा मानव को महामानव बनाना है। इसके साथ ही यह संस्था श्री प्राणनाथ जी की अलौकिक वाणी का प्रकाश फैलाकर सम्पूर्ण विश्व को एक सच्चिदानंद परब्रह्म के प्रेममयी आंगन में भाव-विभोर करने के लिए कृत संकल्पित है। इसके लिए उच्च माध्यमिक शिक्षा प्रदान कर ऐसे विद्वानों को तैयार किया जा रहा है जो संसार को धर्म के वास्तविक स्वरूप का बोध करा सकें और सच्चिदानंद परब्रह्म के साक्षत्कार का यर्थाथ मार्ग दर्शा सकें।

ज्ञानपीठ में उपलब्ध सुविधाओं में मुख्यतः शिक्षा कक्ष, पुस्तकालय व वाचनालय, ध्यान कक्ष, प्रवचन कक्ष, कम्प्यूटर कक्ष, दृश्य-श्रव्य स्टूडियो, छात्रावास, भोजनालय, मुद्रणालय, गौशाला इत्यादि सम्मिलित है।

कालान्तर में ज्ञानपीठ की पन्ना (मध्य प्रदेश), बड़ोदरा (गुजरात), दाहोद (गुजरात), सिक्किम तथा तालावाड़ि (तमिलनाडु) में शाखाएं श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र के नाम से स्थापित की गई हैं जो समाज में ब्रह्मज्ञान का आध्यत्मिक शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने में निरन्तर कार्य कर रही हैं।

: सम्पर्क करें :

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड़, सरसावा, जिला सहारनपुर–247232 (उ.प्र.)

E-mail : shriprannathgyanpeeth@gmail.com

Website : www.spjin.org • **WhatsApp:** +91 +91 75338 76060

प्रेरणा स्रोत
राजन स्वामी

•

मुख्य संपादक
आचार्य सुभाष
9725389547

•

संपादक
कृष्ण कुमार कालड़ा
9414846972

• • •

लेखों में प्रकट किए गए विचार लेखकों के व्यक्तिगत विचार हैं। इनके प्रति प्रकाशक/संपादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र सहारनपुर होगा।

• • •

सदस्यता शुल्क

वार्षिक रु. 200/-
आजीवन (10 वर्ष) रु. 1800/-

तारतम मंजरी

वर्ष 10 • अंक 11 • नवम्बर 2025 • बुद्धजी शाका 347
विक्रम संवत् 2082

इस अंक में

	सम्पादकीय	3
1.	वैदिक शिक्षा का महत्व – राजन स्वामी	4
2.	चरखा (The Spinning Wheel) – नरेन्द्र पटेल	8
3.	दुख रे प्यारे मेरे प्रान को – अश्विनी कुमार दुबे	11
4.	बहिश्तों का बेवरा – वाला जी निजानंदी	14
5.	जागनी रास – कृष्ण कुमार कालड़ा	16
6.	अक्षरातीत के मूल स्वरुप और लीला के स्वरुप में अंतर	18
7.	प्रेम के बिना आध्यात्मिक यात्रा अधूरी – डॉ. नैन्सी	22
8.	क्या है भगवान् श्री कृष्ण जी का गोवर्धन पर्वत उठाना? यह गोवर्धन पर्वत क्या है? – आचार्य सुभाष	25
9.	उत्तर भारत में जागनी यात्रा का शंखनाद	29
10.	१६वां वार्षिक उत्सव : सुंदरसाथ के अनुभव	30

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
नकुड़ रोड़, सरसावा 247232, जिला सहारनपुर (उ. प्र.)
फोन : +91 70881 20381
ई-मेल : tartammanjari@gmail.com

किरंतन

राग श्री गौड़ी

भाई रे ब्रह्मग्यानी ब्रह्म देखलाओ, तुम सकल में सांई देख्या ।
ए संसार सकल है सुपना, तो तुम पारब्रह्म क्यों पेख्या ।।१।।

सत सुपने में क्योंकर आवे, सत सांई है न्यारा ।
तुम पारब्रह्म सों परच्याश नाहीं, तो क्यों उतरोगे पारा।।२।।

तुम बैकुंठ जमपुरी एक कर देखी, तब तो सास्त्र पुरान सब भान्या ।
सुकदेव व्यास के वचन बिना, कौन कहे मैं जान्या ।।३।।

यामें बड़भागी भए जाको सुकदेव का गुन भाया ।
उत्तम टीका कीन्ही दसम की, तो इन ए फल पाया ।।४।।

बिना पुरान प्रकास न होई, सास्त्र बिना कौन माने ।
एक अखर को अर्थ न आवे, तो ब्रह्म भरम में आने ।।५।।

काल आवत कबूं ब्रह्म भवन में, तुम क्यों न विचारो सोई ।
अखंड सांई जो यामें होता, तो भंग ब्रह्मांड को न होई ।।६।।

तुम केवल काल तत्व ग्यानी, ब्रह्म ग्यानी भए ।
सब दरवाजे खोजे साधो, पर सुन्य छोड़ कोई ना गए।।७।।

इन सुपने में सब कोई भूल्या, किनहूं न देख्या पार ।
बिध बिध सों भवसागर थाह्या, सुकदेव व्यास पुकार ।।८।।

यामें प्रेम लछन एक पारब्रह्म सों, एक गोपियों ए रस पाया ।
तब भवसागर भया गौपद बछ, विहंगम पैंडा बताया।।९।।

कई दरवाजे खोजे कबीरें, बैकुंठ सुन्य सब देख्या ।
आखिर जाए के प्रेम पुकास्या, तब जाए पाया अलेखा ।।१०।।

भाई रे ब्रह्मग्यानी ब्रह्म सुपने में, महामत कहे यों पाइए ।
पार निकस के पूरन होइए, तब फेर सब दृष्टें देखाइए ।।११।।

(प्रकरण ३२)

सम्पादकीय

अर्स ल्यो या दुनियां, दोऊ पाइए ना एक ठौर

दावा तो हम ब्रह्मसृष्टि होने का प्रायः करते हैं परन्तु क्या सच में हमारी रहनी ऐसी है कि हम अपने दावे पर खरे उतर सकें? इसका उत्तर नकारात्मक ही होगा। अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति का सिद्धांत कहता है कि हमें श्री राज जी की भक्ति सदा पतिव्रता भाव से करनी चाहिए – 'पतिव्रता पणे सेविए' लेकिन हम अन्य देवी-देवताओं की पूजा भी करते हैं। मैं यहां बीतक साहेब की एक चौपाई उद्धृत करना चाहूंगा जिसमें परमधाम के ब्रह्ममुनियों के लक्षण बताते हुए वेदव्यास जी राजा जन्मेजय से कहते हैं-

उत्तम पुरूष बिन और को, देवी देव न ध्याये।
अकथ कथा नवतन कहे, जग सुन पूजे ताये।।(बीतक ३७/६४)

अर्थात् उनकी सबसे बड़ी पहचान यही है कि वे उत्तम पुरूष अक्षरातीत के अतिरिक्त अन्य किसी भी देवी-देवता की उपासना नहीं करेंगे और वे ऐसे अलौकिक नये ज्ञान (तारतम वाणी) की चर्चा करेंगे, जिसको आज तक किसी ने नहीं कहा। वाणी में एक अन्य स्थान पर तो ऐसे लोगों को 'वेश्या' तक की संज्ञा दी गई है-

पतिव्रता पणे सेविए, न थाय वेस्या जेम।
एक मेलीने अनेक कीजे, तेणी थाय धणीवट केम।।(किरंतन १२८/४४)

इसी प्रकार, गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं- 'योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते' अर्थात् जिसमें एक परमात्मा को छोड़कर अन्य की उपासना हो, उसे व्यभिचारनी भक्ति कहा गया है। क्या हम सच्चे हृदय से यह कह सकते हैं कि हम एकमात्र एक सच्चिदानंद परमात्मा की भक्ति करते हैं?

अतः हम यदि अपने प्रियतम अक्षरातीत को छोड़कर अन्य देवी-देवताओं के पीछे भागेंगे तो क्या यह उनका अपमान नहीं होगा? हम जिन लौकिक कामनाओं की पूर्ति के लिए इनकी उपासना करते हैं वो तो हमारे धनी भी हमको दे सकते हैं। किंतु, इसके साथ ही उनके पास इश्क और इल्म का जो अनमोल खजाना है वो हमें कोई देवी-देवता नहीं दे सकता।

उल्लेखनीय है कि राम, कृष्ण, शंकर, हनुमान, गणेश आदि इस सृष्टि के महापुरूष हैं, अतः इनका सम्मान अवश्य कीजिए लेकिन भक्ति केवल और केवल एकमात्र अक्षरातीत परब्रह्म श्री राज जी की। इसके साथ ही श्री प्राणनाथ जी के वाङ्मय स्वरूप (श्री कुलजम स्वरूप साहेब) के अतिरिक्त किसी अन्य स्वरूप, व्यक्ति, मूर्ति, चित्र, समाधि या जड़ वस्तु की पूजा निषेध है।

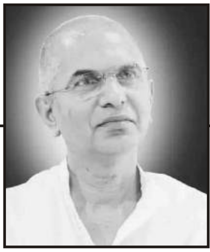

राजन स्वामी, सरसावा

वैदिक शिक्षा का महत्व

देश के भिन्न-भिन्न कोनों से पधारे हुए संत, महापुरुष, विद्वतजन, आत्मिक भाइयों और बहनों! अध्यात्म जगत में जिज्ञासा रहती है कि ब्रह्म कहते किसको हैं? मैं सामान्य रूप से सीधी भाषा में कहता हूं 'यस्मात् परिणामात् किञ्चित्', अर्थात् जिससे श्रेष्ठ कुछ नहीं है। वेद में एक मंत्र आता है - 'न त्वा अन्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते', अर्थात् हे परमात्मा, तेरे जैसा ना कोई था, ना है, ना होगा।

'सत्यं ज्ञानम् अनन्तं ब्रह्म', अर्थात् वही ब्रह्म है जो प्रकृष्ट सत्य स्वरूप है, ज्ञान स्वरूप है, आनंद स्वरूप है और अनंत है, उसको किसी सीमा के बंधन में नहीं बांधा जा सकता। परमात्मा, धर्म और सत्य तीनों एकार्थवाची शब्द हैं। धर्म किसी पूजा पद्धति को नहीं कहते हैं। आजकल 'सनातन' शब्द की बहुत चर्चा चल रही है। हम मूलतः कह देते हैं कि हम सभी सनातनी है, लेकिन एक प्रश्न खड़ा होता है। सनातन कहते किसको हैं? सनातन वह है जो अनादि काल से चल रहा हो और अनंत काल तक चलता रहे, लेकिन ऐसा देखने में नहीं आता। जो विचारधाराएं होती हैं वह मनुष्य प्रतिपादित होती हैं। संप्रदाय नष्ट होते हैं, बनते हैं, बिगड़ते हैं। संप्रदाय, मजहब या रिलीजन, उनकी उत्पत्ति होती है और दूसरी विचारधाराएं उनको नष्ट कर देती है। लेकिन जो धर्म है, जब सृष्टि नहीं थी तब भी धर्म था, जब सृष्टि नहीं रहेगी तब भी धर्म रहेगा। दूसरे शब्दों में, सृष्टि से पहले भी परमात्मा था और बाद में भी परमात्मा रहेगा। इसलिए, जो सत्य है वही परमात्मा है और जो सत्य है वही धर्म है।

धर्म की विस्तृत व्याख्या ग्रंथों में की गई है, यहां समयाभाव के कारण संकेत में इतना कह सकता हूं 'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्', अर्थात् धर्म का तत्व गुहा में निहित है। जो ब्रह्म का साक्षात्कार करता है, एकमात्र धर्म के स्वरूप को वही जानता है। मैं एक थोड़ा-सा कटु सत्य कहना चाहूंगा, जब हम कहते हैं कि हम सनातनी है तो मुझे कुछ हंसी भी आती है। मैंने कहा जो सत्य है वही सनातन है।

सत्य क्या है, मनु जी ने कहा - 'वेदोऽखिलो धर्ममूलं', अर्थात् धर्म के मूल वेद है। क्या आज का तथाकथित हिंदू समाज वेद के अनुकूल आचरण करता है, क्या वेद की मान्यताओं को मानता है? वेद ने तो कहा कि

“एकमेवाद्वितीयम्”, उपनिषद का वाक्य है। वेद कहता है, एकमात्र परमात्मा ही उपास्य है। गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण ने वेद के सार तत्व को समझाते हुए कहा कि ‘तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन’। इसी प्रकार, गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं ‘योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते’ अर्थात् अव्यभिचारनी भक्ति क्या है, जिसमें एक परमात्मा को छोड़कर अन्य किसी की भी उपासना न हो। क्या हम हिंदू सच्चे हृदय से यह कह सकते हैं कि हम एकमात्र एक सच्चिदानंद परमात्मा की भक्ति करते हैं।

आज हमारा हिंदू समाज १,२०० जातियों और १,००० संप्रदायों में बटा हुआ है। सबकी अपनी-अपनी मान्यताएं हैं, सभी आपस में झगड़ रहे हैं, सब दूसरे की मान्यताओं का खंडन करते हैं लेकिन उनकी स्वयं मान्यताएं स्वयं वेद के विपरीत है। वेद किसी वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व नहीं करता। यजुर्वेद में जो राष्ट्र वंदना है-

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम् आराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्ण रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्। (यजु. २२/२२)

यह भारतीय भी कर सकता है, पाकिस्तानी भी कर सकता है, अमेरिकी भी कर सकता है, रशियन भी कर सकता है, क्योंकि वेद उस सर्वशक्तिमान परमात्मा की वाणी है जिसके समक्ष करोड़ों ग्लेक्सियों वाली ये सृष्टि एक परमाणु के समान है। हमनें न केवल परमात्मा को बल्कि ‘सनातन’ शब्द को भी एक छोटे से दायरे में बांध दिया है। जिस दिन हम वेद के ज्ञान की मात्रा को समझेंगे, उस दिन हमारी सारी सीमाएं भारत ही नहीं, समस्त सृष्टि को भी पार कर अद्वैत धाम में स्थित होंगी।

आप कहते हैं- ‘ओम शांति शांति।’ वेद में शांतिपाठ की शुरुआत कहां से होती है, ‘ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।’ द्यौःलोक किसको कहते हैं, जहां से करोड़ों गैलेक्सियां निकल रही है। हम पृथ्वी पर कुछ मान्यताओं को लेकर, कुछ व्यक्तियों को लेकर एक संप्रदाय बना लेते हैं और समझते हैं कि सनातन इतना ही है, जबकि ऐसा नहीं है। हम जितने अनंत की कल्पना करते हैं, उससे भी परे जो अनंत परमात्मा है, ‘पादोऽस्य विश्वा भूतानि, त्रिपादस्यामृतं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः’ उस परमात्मा का ज्ञान वेद है और वेद का उल्लंघन करने वाला कभी सच्चा सनातनी नहीं कहला सकता। वो सनातनी कहला सकता है, क्योंकि भारत में जो पैदा हुआ है, वेद के किसी न किसी अंश को ले सकता है लेकिन पूर्ण अंशों में हम ले चलेंगे तो हम पूर्ण शुद्ध सनातनी है। पूर्ण अंश में हम पालन नहीं कर सकते हैं, हम अपनी सांप्रदायिक कट्टरता को प्राथमिकता देते हैं तो कहीं न कहीं हम अंश रूप का ही पालन करने वाले सनातनी कहे जा सकते हैं। मेरी बातें कुछ कड़वी लग सकती है, इसलिए मैं क्षमा चाहता हूं क्योंकि अलग-अलग विचारधाराओं के अनुयाई मंच पर बैठे रहते हैं और ये मेरी बात सब जगह पहुंच रही होगी।

ज्ञान सृष्टि को धारण करने वाला होता है। वेद में कहा गया है कि ‘सत्येनोत्तभिता भूमिः’ अर्थात् पृथ्वी किससे टिकी हुई है, सत्य से टिकी हुई है, सत्य ही परमात्मा है, सत्य ही ज्ञान है, वेद ही सत्य है और इसलिए आज आवश्यकता है कि वेद के शाश्वत सत्य को हम धारण करें।

हमारा समाज कितनी संकीर्णताओं से गुजर रहा है, मैं उसकी थोड़ी-सी एक झलक दिखाना चाहूंगा और उसको सुधारना बहुत जरूरी है। मैंने पहले ही कह दिया, वेद केवल एकेश्वरवाद के कर्ता हैं, इसलिए योगेश्वर श्री कृष्ण ने कहा कि 'तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन' अर्थात् हे अर्जुन, क्षर अक्षर से परे जो उत्तम पुरुष अक्षरातीत है, 'यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः' केवल वही परमात्मा है और केवल उसी की उपासना करो। हम इसको स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। हम आपस में कहेंगे कि हमारे इष्ट बड़े हैं, तुम्हारे इष्ट छोटे हैं। दूसरों के इष्ट को छोटा बनाते-बनाते ये हिंदू समाज न जाने क्या-क्या कल्पनाएं करने लगा और हम जातियों में बंट गए।

'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः' अर्थात् गुण कर्म के अनुसार वर्ण व्यवस्था है, जबकि यह कर्म के अनुसार होनी चाहिए, न ही जन्म के आधार पर कोई जाति निर्धारित की जा सकती है। गीता में श्री कृष्ण ने क्या कहा है- 'विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि' अर्थात् ब्राह्मण में, गाय में, कुत्ते में, चंडाल में जो एकत्व देखता है वो पंडित कहलाता है। क्या हम इसके लिए तैयार हैं, नहीं।

वेदांत का एक सूत्र हैं- 'अपि च स्मर्यते।' मैं नाम लेकर क्या कहूं, इस सूत्र की व्याख्या सभी आचार्यों ने की है। हम शूद्र को यदि चलता-फिरता शमशान कहेंगे तो हिंदू समाज एक झंडे के नीचे कहां से आएगा, कहां से प्रेम पड़ेगा। जो वेद की वाणी कहती है - 'तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः' अर्थात् हम सब में एकत्व देखने की बात करते हैं लेकिन हम भेद बनाए बैठें हैं हजारों जातियों का, जो हमने पौराणिक व्याख्याओं के आधार पर मान्यता कर ली है। परिणाम क्या हुआ, हजार वर्षों से देश पद-दलित रहा, न जाने कितने करोड़ लोग मारे गए, न जाने कितनों के मस्तकों से मीनारें बना दी गई, विदेशी आक्रांता आए, यहां की संस्कृति को मिटाते गए। यहां के लोग स्वयं नहीं जान पाए कि उनके पास वेद का ज्ञान था लेकिन उसको उन्होंने प्रसारित नहीं किया।

जो देश सारी मानव जाति को कहता है - 'सर्वेऽस्माकं मित्रं भवन्तु', जो जिस देश में वेदों का ज्ञान अवतरित हुआ, जिसके लिए मनु ने कहा कि ये तो 'देश-प्रसुता सहसा अग्रजनमना' लेकिन हम एक छोटे-से दायरे में आज सिमट करके रह गए हैं। इसका कारण यह है कि हमने वेद के ज्ञान को छिपा दिया, हम जातियों में बंटे, संप्रदायों में बंटे और आज आवश्यकता यही है कि हम अपनी भूलों को सुधारें। वैदिक ज्ञान को पुनर्जीवित करें, गुरुकुलों की स्थापना करें।

हम करोड़ों-करोड़ों के मंदिर तो बना देंगे लेकिन वैदिक ज्ञान को फैलाने का प्रयास नहीं करेंगे और सबसे बड़ी बात ध्यान के द्वारा ही उस परमात्मा को जाना जा सकता है। आप सारा योग दर्शन पढ़िए, सारे उपनिषद पढ़ लीजिए, वेदांत पढ़ लीजिए, वेद पढ़ लीजिए, सबका एक ही सार आएगा- 'गुहायां प्रविष्टोऽत्मादर्शनात्', अर्थात् परम गुहा में प्रविष्ट हुए बिना ब्रह्म का साक्षात्कार नहीं हो सकता और इसलिए ध्यान की प्रक्रिया को बढ़ाने की आवश्यकता है, ज्ञानार्जन की प्रक्रिया को बढ़ाने की आवश्यकता है।

ज्ञान को हम जितना बांटेंगे, वेद ने कहा है- 'सत्यं हि समाह', सौ हाथों से बटोरिए, हजार हाथों से लुटाइए। ये ज्ञान को छिपाने का अभिशाप ही तो हमें ले डूबा है। एक समय में छहों महाद्वीपों में वैदिक संस्कृति थी, सर्वत्र वेद का स्वर गूँजता था, आज हम सिमटते-सिमटते भारत में भी असहाय की अवस्था में हैं, ये हमारे अपराधों का दंड है। हमने

वेद ज्ञान को छिपाया, हमने सबके अंदर एक चेतना को नहीं देखा, जिसके लिए वेद का उपदेश है- 'तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः' - हम ब्राह्मण में, गाय में, कुत्ते में, चंडाल में सबमें एक चेतना देखने की बात करते हैं लेकिन जब व्यवहार की बात आती है तो हजार जातियों में बंटकर दूसरों को घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं।

इन भूलों को सुधारे बिना हमारा वैदिकत्व का सूर्य कभी चमक नहीं सकेगा और अध्यात्म का सच्चा ज्ञान सामने नहीं आ सकता। इसलिए देश के सामने आवश्यकता है कि सभी वैदिक शिक्षा को बढ़ावा दें, सांप्रदायिकता के द्वेष की अग्नि को कम करें। सांप्रदायिकता जब तक रहेगी अध्यात्म का सच्चा स्वरूप निखर कर नहीं आयेगा, अध्यात्म का स्वरूप, परमात्मा का स्वरूप सांप्रदायिक रूढ़िवादिता से, कर्मकांडों से सभी से परे है। इसलिए वेद का ज्ञान किसी के प्रमाण की अपेक्षा नहीं कर सकता, वो स्वतः प्रमाणभूत है। दूसरे जितने भी ग्रंथ है वो मनुष्य कृत है, वेद मनुष्य कृत नहीं है, इसलिए दर्शन शास्त्र कहते हैं- 'न पौरुषेयत्वं तत्कर्तुः पुरुषस्याभावात्।'

वेद की वाणी को हम प्रसारित करें; परमात्मा, जो क्षर अक्षर से परे, उत्तम पुरुष अक्षरातीत है, उसको जाने, और स्वयं को जाने, जिसके लिए तारतम वाणी कहती है- 'बिना आप चीन्हें पारब्रह्म को, कौन कहे मैं जानो।' जीवन का परम लक्ष्य क्या है, पहले आप पहचानो, हम स्वयं को जाने, जब तक अपने को नहीं जानेंगे- 'कोहं कुतः आगतो अस्मि देहान्ते प्रलयान्ते वा कुत्र गमिष्यामि' - तब तक हमारे जीवन का लक्ष्य पूरा नहीं होगा। मैं आशा करता हूं कि आप मेरे वचनों को अंगीकार करेंगे।

(ब्रह्माकुमारी विश्वविद्यालय, माउंट आबू में आयोजित विश्व एकता संगोष्ठी में सम्बोधन)

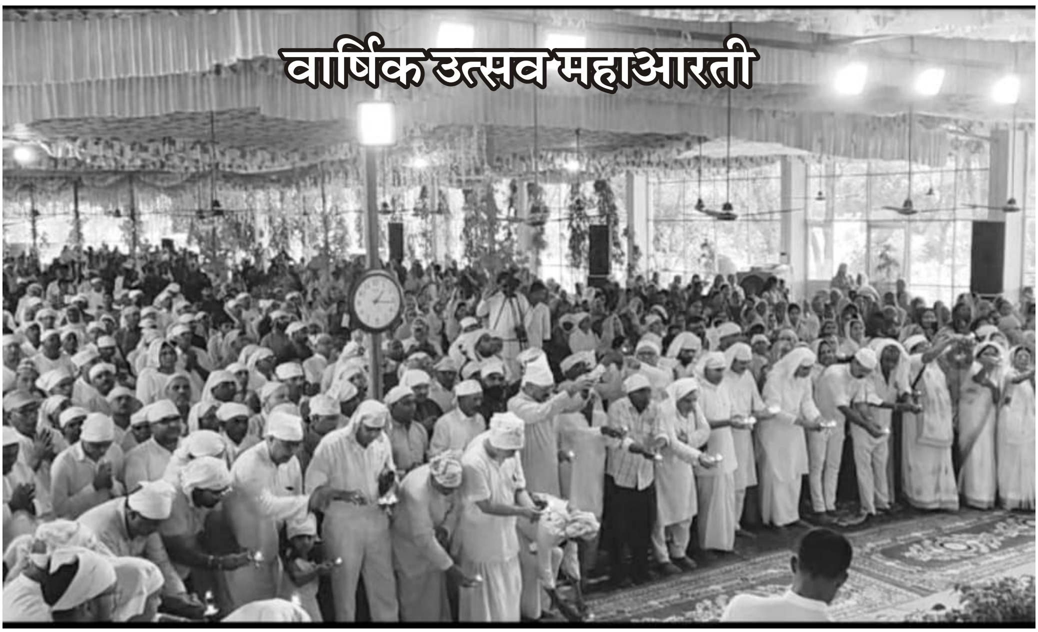

नरेन्द्र पटेल, यूएसए

चरखा (The Spinning Wheel)

चरखा : चेतना के विकास का रूपक

तारतम अवतरण एवं गांधी जयंती के अवसर पर महामति प्राणनाथ तारतम वाणी का दिव्य संदेश

The Spinning Wheel: A Metaphor for the Evolution of Consciousness:

A Divine Message from Mahamati Prannath's Tartam Vani on the Occasion of Taratam Avataran and Gandhi Jayanti

हे मेरे हृदय-प्रिय सुन्दरसाथ सच्चे,
लाओ विश्वास की रूई, निर्मल जैसे प्रातःओस ।
हर श्वास को मानो रूई का एक गोला,
तन है चरखा, जहाँ धागा हो खोला।

O my sweet hearted companions, my Sundersath so true,
Gather the cotton of faith, pure as morning dew.
See each breath as a roll, soft yet strong,
Your body the wheel, where the threads belong.

सीधा करो तकुआ, मन को साधो कातने,
सजगता से मरोड़ो सूत, भक्ति लगे बातने।
हर गोले से सावधानी से कातो धागा,
तन-मन समर्पित कर, साधो यह रागा।

Straighten the spindle, your mind tuned to spin,

Twist the cord with awareness, let devotion begin.
Carefully craft the thread from each cotton roll,
Spin with your effort, offering body and soul.

समय आने पर बारीक सूत कातना,
मौन रहकर प्रभु-प्रेम को पाना।
अवसर खोया तो शेष रह जाएगी पीड़ा,
अनेक साथ चले गए, छोड़ गए खीझा।

Spin the fine yarn when the moment is near,
Do it silently, and the Lord's love will appear.
Miss this chance, and regret shall remain,
Many companions have left, bearing sorrow and pain.

अंतर में एक हो, प्रेम ही दिखाओ,
दूसरों के तकुए भी सीध में लाओ।
साथियों को प्रेरित करो, देर न करो कताई,
कटु वचनों की ओर मत देना दृष्टि भाई।

Be united within, and love must you show,
Help others align their spindles, let guidance flow.
Encourage your companions, spinning without delay,
Ignore sarcastic words that might lead you astray.

बनाओ कातने वालों की मंडली सजग-सशक्त,
भटके हुओं से बचो, उनके तकुए करो भंग।
वे भी पाएँगे उपहास अपने कर्म का,
क्योंकि प्रभु सब देखे, गूढ़ है ज्ञान उनका।

Form a team of spinners, strong and aware,
Watch for those who misguide, break spindles with care.
They too will face the mockery they sow,
For the Lord observes all, His wisdom we know.

उत्साह से उठो, हृदय में प्रकाश भरो,

साहस लेकर भक्ति की ज्योति जलाओ।
तुम्हारे हाथ बने हैं सच्चे धागे बुनने को,
समय यही हैकृनींद से बचो डूबने को।
Rise with excitement, let your heart shine bright,
Take courage and start with devotion’s light.
Your hands are made for threads fine and true,
Now is the time—sleep will undo you.
नींद त्याग कर दौड़ो, प्रियतम के बनो प्यारे,
तुम्हारा सूत होगा अमूल्य, प्रभु को न्यारे।
अपने स्वामी को पहचानो, पूर्ण समर्पण करो,
दिन-रात कातो, जब तक प्रेम प्रकट न हो।
Leave slumber behind, run to become His beloved,
Your yarn shall be precious, truly cherished and hallowed.
Recognize your Lord, surrender fully, be His own,
Spin day and night, till His love is fully shown.
प्रेम और सेवा के बुनकर बने जो महीन धागे,
निश्चय पायेंगे प्रियतम की कृपा के अनमोल भागे।
The finest threads of love and service spun,
Shall surely earn the grace of the Beloved One.
- श्री प्राणनाथ तारतम वाणी : प्रकाश हिंदुस्तानी २७/७-११
—Shri Prannath Tartam Vani: Prakash Hindustani 27/7-11

पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानंद परमात्मा केवल एक ही है। इस शाश्वत सत्य को शास्त्रों के प्रमाणों से सिद्ध कर संपूर्ण विश्व और सभी धर्मों को एक सूत्र में पिरोने के लिए २६ अक्टूबर २०२५ को सहारनपुर में एक–दिवसीय विश्व जागृति कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें श्री राजन स्वामी जी मुख्य वक्ता थे।

अश्विनी कुमार दुबे, इंदौर

दुख रे प्यारे मेरे प्रान को

दुख और सुख, इसकी संसार में बहुत चर्चा है। इन दोनों शब्दों के गूढ़ार्थ समझना बहुत जरूरी है। जब हमारे मन का न हो, घटनाएं हमारे अनुकूल न हों, भौतिक वस्तुओं का अभाव हो तो उस स्थिति को हम दुख कहते हैं। इसके विपरीत जब सब कुछ हमारे मनोनुकूल हो, घटनाएं हमारे पक्ष में हों और भौतिक वस्तुओं की कोई कमी न हो तो उसे सुखमय जीवन कहते हैं। ये दोनों स्थितियां हिंडोले की भांति हैं, कभी इधर, क्षण भर बाद उधर। जीवन भर आदमी इन स्थितियों में डोलता रहता है। कभी स्थिर नहीं रह पाता। श्री कृष्ण ने गीता में कहा है-

सुख-दुखे के समे कृत्वा लाभालाभौ जया जयो।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवा टस्यसि।।

अर्थात् सुख-दुख, लाभ-हानि, जय-पराजय सबको समान समझकर - हे अर्जुन, तू युद्ध के लिए तैयार हो जा। इस प्रकार तू पाप को प्राप्त नहीं होगा।

यहां श्री कृष्ण अर्जुन से इस संसार में कर्तव्य युद्ध जीतने की बात कहते हैं। इस युद्ध में सेनाएं सामने खड़ी हैं और अर्जुन, जो युद्ध न लड़ने की बात कह रहा था, उसे कृष्ण युद्ध के लिए तैयार कर रहे हैं।

एक और युद्ध है जीवन में माया के साथ जिसके लिए श्री महामति जी आपको तैयार कर रहे हैं। इस युद्ध में माया सामने स्पष्ट दिखाई नहीं देती परंतु वह आपको अदृश्य रूप से घेर कर प्रहार करती है। माया के इस प्रहार से आपको कोई नहीं बचा सकता। इस युद्ध में आपकी रक्षा वही कर सकता है, जो माया का स्वामी हो अर्थात् जिससे माया निर्मित है और जिसकी वह दासी है। वही 'एक' आपकी माया से इस युद्ध में रक्षा कर सकता है। वही एकमात्र आपको माया के प्रहार से बचा सकता है।

वह 'एक' कौन है और कैसे मिलेगा? वह दुख में याद आता है। दुख में उसकी स्मृति घनीभूत होती है। इस प्रकार यह दुख बहुमूल्य है। श्री महामति जी कहते हैं-

इन अवसर दुख पाइए और कहा चाहियत है तोहे।
दुख बिन चरण कमल को, सखि कबहूँ न मिलिया कोए।।

अर्थात् इस जीवन में कुछ भी बिना कारण नहीं होता। दुख है तो उसके कारण ही पिउ का स्मरण है। यदि यह दुख न होता तो क्या आप उसे याद करते? महामति जी कहते हैं– 'हे सखि, इस दुख का उपयोग कर ले। बिना दुख के प्रियतम के चरण कमलों को कोई प्राप्त नहीं कर पाया।'

मीरा ने भी घायल होकर ही अपने प्रियतम को पाया। वे कहतीं हैं– 'मेरा दरद न जाने कोए, घायल की गति घायल जाने, जो कोई घायल होए।'

क्या होता यदि उसे राज महल मिल गया होता? महल में खूब दास-दासियां होतीं। उसने स्वयं राज महलों के सुख छोड़कर दुख अपनाया क्योंकि 'दुख के बिना चरण कमल को, सखि कबहूँ न मिलिया कोए।'

इसी प्रकार, कबीर कहते हैं– 'मन लागा मेरा यार फकीरी में, भला-बुरा सबका सुन लीजे, कर गुजरान गरीबी में।' यहां गरीबी अर्थात् अभावों में गुजर-बसर करने की बात है। अभाव, अर्थात् दुख, जिसमें कबीर का मन रम गया है। लोग भला-बुरा कहेंगे। कहते रहें– 'हमन हैं इश्क मस्ताना, हमन को दुनिया से यारी क्या?'

इस प्रकार, दुख की बड़ी महिमा है। आप इससे पीड़ित न हों, परेशान न हों, इसका उपयोग कर लें। श्री महामति जी तारतम वाणी में कहते हैं–

दुख तो हमारो आहार है, औरन को दुख खाए।
दुख से भागे सब फिरें, कोई बिरला साथ निवाह।।

जरा-सा दुख आया कि हम उससे पिंड छुड़ाने की सोचने लगते हैं। बेचैन हो जाते हैं। जबकि महामति जी कहते हैं– 'दुख तो हमारो आहार है।' कोई और लोग होंगे वे जिन्हें दुख खा जाता है। मैं तो दुख को ही खा जाता हूं, यह मेरा आहार है।

इस प्रकार, सब लोग दुख से भाग रहे हैं। कोई बिरला, शूरवीर ही दुख के साथ अपना निर्वाह कर पाता है। जो दुख सहने के लिए सहर्ष तैयार हो जाए तो परमात्मा उसके साथ हैं। इसलिए, हमारे प्रियतम ने हमें दुख दिया–

ता कारण दुख देत हैं, दुख बिना नींद न जाए।
जिन अवसर मेरा पिउ मिले, सो अवसर नींद गंवाए।।

यह जीवन का एक अवसर है, पिउ की तलाश के लिए। जो सुख में है वे सोये हुए हैं। दुख देकर प्रियतम ने तुम्हारी नींद भंग की है। यह अवसर जो पिउ की खोज में लगना चाहिए था, वह नींद में खोया जा रहा है। इसलिए पिउ ने दुख देकर तुम्हें नींद से जगाया है। इसे अपना सौभाग्य मानो। श्री महामति जी फिर कहते हैं–

नींद बुरी या भरम की, भरम तो भई आड़ी पाल।
वह सुख देत जलाए के, जो आड़ी भई अपने लाल।।

यहाँ सुख की नींद, भ्रम की नींद है। जैसे नींद में सुख-सपने दिखाई देते हैं। वे क्या हैं, एक भ्रमजाल से ज्यादा नहीं। यह भ्रम ही तो तुम्हारे और पिउ के बीच पर्दा है। यह नींद निगोड़ी, यह भ्रम, ये दिवा स्वप्न बाधा हैं, परमात्मा से मिलन में। इसलिए इस भ्रम को जलाकर, श्री महामति जी हमारा साक्षात्कार प्रियतम से कराना चाहते हैं। इसलिए, वे बार-बार चेताते हैं–

नींद निगोड़ी न उड़ी, जो गई जीव को खाए।
रात-दिन अगनी जले, जब जाए नींद उड़ाए।।

यह नींद निगोड़ी, बहुत गहरी है। यह अपने आप नहीं टूटती। यह तो जीव को ही खा जाती है। सोते रहो। क्या मिलेगा? जीवन नष्ट हो जाएगा। अर्थात् तुम्हारा अमूल्य जीवन सिर्फ नींद के हवाले हुआ! क्या इसलिए जीवन मिला था? फिर रात-दिन जब विरह की अग्नि जलती है, तब जाकर कहीं नींद टूटती है।

जब हम नींद से जागेंगे, जागकर द्वार-दरवाजे खोलेंगे, तभी तो सूरज की किरणें हमारे घर में प्रवेश करेंगी। नींद में, मुंदी आंखों से कभी किसी को सूरज दिखाई दिया है? वह सुख किस काम का जो नींद में ले जाए। इसलिए तथाकथित सुख के पीछे मत भागिए और जीवन में जो दुख है, उसका सम्मान करिए। श्री महामति जी कहते हैं-

जिन सुख पिउजी न मिले, जो सुख देऊँ जलाए।
जिन दुख मेरा पिउ मिले, मैं सो दुख लेऊँ बुलाए।।

ऐसे सुख का क्या करूं जो मुझे अपने प्रियतम से दूर ले जाए। ऐसे सुख को तो जला देना चाहिए, नष्ट कर देना चाहिए। परंतु दुनिया उसी सुख के पीछे पागल है। वह दुनिया का सुख पानी के बुलबुले से ज्यादा नहीं है। अब फूटा कि तब फूटा। क्षणभंगुर। वहीं दुख, प्रियतम का संदेश लेकर आता है। जिस दुख से मेरा प्रियतम मिलता हो, मैं उस दुख का सौ बार वरण करना चाहूंगी।

दरअसल सुख और दुख की अपनी कोई हस्ती नहीं है। यह एक तरह की भाव दशा है। सुख की भाव दशा नींद की ओर ले जाती है। इससे चित पर मदहोशी छा जाती है और दुख की भाव दशा हमें चैतन्य करती है। जब हम चैतन्य होते हैं, नींद से पूरी तरह जागे हुए, तब पिउ का स्मरण करते हैं। सुखों की नींद में सोते हुए पिउ का स्मरण भला कैसे हो सकता है? इसलिए दुख और विरह की इतनी महिमा है।

सुख तो सपना है ही। अंत में, दुख भी सपने की तरह छूट जाता है। इसका यहां सार्थक उपयोग है कि वह हमें परमात्मा के स्मरण की ओर प्रेरित करता है। जब प्रियतम से मिलन हो जाता है, तब सुख और दुख दोनों ही सपने की तरह निरोहित हो जाते हैं। श्री महामति जी (प्रकरण १७) इस स्थिति को पूर्णतः स्पष्ट कर देते हैं-

दुख सब सुपनो होए गयो, अखंड सुख भोर भयो।
महामत खेलें अपने लाल सों, जो अक्षरातीत कहयो।।

जब अपने लाल (प्रियतम) से मिलन हुआ, तब दुख भी स्वप्न की तरह विलीन हो गया। वहां सुख और दुख दोनों न रहे। वहां तीसरी स्थिति है, इनसे परे आनंद की, परमानंद की। अर्थात् जब हमनें दुखों में, विरह में अपने पिउ को दिल से याद किया, अपने पूरे प्राणों से उसका स्मरण किया तो वह सदा उपस्थित है-

एक सीढ़ी है हृदय में भी, महज घर में नहीं।
सर्जना के दूत आते हैं, सभी होकर वहीं।।

वाला जी निजानंदी

बहिश्तों का बेवरा

तारतम वाणी में आठ बहिश्तों (मुक्ति स्थान) का उल्लेख आता है। ये सभी योगमाया में स्थित हैं। योगमाया को अक्षर के अंतःकरण के अनुसार चार भागों में विभक्त किया गया है - मन(अव्याकृत ब्रह्म), चित्त(सबलिक ब्रह्म), बुद्धि (केवल ब्रह्म) और अहंकार (सत्स्वरूप ब्रह्म)।

पहली बहिश्त, जो सत्स्वरूप ब्रह्म में अखण्ड होगी, में श्री मेहराज ठाकुर जी का जीव और श्री देवचन्द्र जी का जीव अखण्ड होंगे। यह दोनों जीव युगल-स्वरूप बनकर सिंहासन पर विराजमान होंगे। इनके साथ वो बारह हजार जीव भी अखण्ड होंगे जिन पर परमधाम की सखियों ने बैठकर लीला देखी होगी। शेष सात बहिश्तों में जो भी जीव अखण्ड होंगे, वो सब इन्हें ही सुबह उठकर प्रणाम किया करेंगे।

दूसरी बहिश्त में वो सब जीव अखण्ड होंगे, जिन पर अक्षर ब्रह्म की चौबिस हजार कुमारिका सखियों ने बैठकर लीला देखी होगी। यह बहिश्त भी योगमाया के सत्स्वरूप ब्रह्म में अखण्ड होगी।

तीसरी बहिश्त, जो योगमाया के सबलिक ब्रह्म में अखण्ड हो चुकी है, को महंमदी बहिश्त भी कहते हैं। मुहम्मद साहब के समय में जिन जीवों ने अल्लाहतआला, कुरान और मुहम्मद साहब पर पक्का ईमान कायम किया था वो सब इसी बहिश्त में अखण्ड हैं।

इसी प्रकार, योगमाया के सबलिक ब्रह्म में चौथी बहिश्त रास की अखण्ड है। इसमें श्री राजश्यामा जी और सखियों ने रास लीला की थी और लीला करके वापिस परमधाम चले गए थे। जिन तनों पर बैठकर श्री राजश्यामा जी और सखियों ने लीला की थी वो सभी तन इसी चौथी बहिश्त में अखण्ड हैं।

इसी बहिश्त में श्री कृष्ण बांके बिहारी जी किशोर रूप में अखण्ड हैं। यही श्री कृष्ण बांके बिहारी जी पहली बहिश्त अखण्ड होने के बाद उन जीवों को रोज सुबह उठकर प्रणाम किया करेंगे, जो अब इस जागनी के ब्रह्माण्ड में श्री प्राणनाथ जी और श्री जी साहिब जी को जाहिर कर रहें हैं।

पांचवीं बहिश्त भी योगमाया के सबलिक ब्रह्म में अखण्ड हो चुकी है। इसमें वो सारी बृज-गोकुल की लीला अखण्ड है जो श्री राजश्यामा जी और सखियों ने पहले कालमाया के ब्रह्माण्ड में आकर की थी।

यहाँ पर वहीं विष्णु बालमुकुन्द के रूप में अखण्ड है जिन पर पहले कालमाया के ब्रह्माण्ड में श्री राज के जोश के स्वरूप ने बैठकर लीला की थी। सातवें दिन की लीला के बाद यहीं बालमुकुन्द पहली बहिश्त के जीवों को झुककर प्रणाम किया करेंगे। छठी बहिश्त योगमाया के अव्याकृत ब्रह्म में अखण्ड हो चुकी है। यह बहिश्त फरिश्तों और देवी-देवताओं की है।

सातवीं बहिश्त योगमाया के अव्याकृत ब्रह्म में अखण्ड होगी जिसमें जागनी के ब्रह्माण्ड के वो सारे ऋषि-मुनि, पैगम्बर आदि, जो परब्रह्म की खोज में लगे हुए हैं, अखण्ड होंगे।

आठवीं बहिश्त आम खलक अर्थात् जीव सृष्टि की अभी अखण्ड होनी है। इसमें वो सभी जीव अखण्ड होंगे जो इस जागनी के ब्रह्माण्ड में आए हैं।

इस प्रकार, तीसरी, चौथी, पांचवीं व छठी बहिश्त अखण्ड हो चुकी है जबकि पहली, दूसरी, सातवीं और आठवीं बहिश्त सातवें दिन की लीला में अखण्ड होंगीं।

इन सब बहिश्तों को अखण्ड करने की शोभा श्री राज ने हम सखियों को दी है। अगर हम ही नहीं जागेंगे तो "मुक्त देसी ब्रह्मण्ड को आए ब्रह्म आतम सत" का कथन कैसे पूरा होगा?

जागेंगे सिर्फ "वाणी मंथन" से ही अन्यथा और कोई उपाए नहीं है। इसलिए रोज वाणी मंथन किया करें। वाणी मंथन ही आपको रहनी दिखायेगा और चित्तवनी की राह मे ले जाएगा।

वाणी मंथन ही हमारे जीव को अव्वल अर्थात् पहली बहिश्त में ले जाकर "ब्रह्मात्मा" का शोभा देगा।

हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी शरद पूर्णिमा के पावन अवसर पर ३ से ६ अक्टूबर, २०२५ तक श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, पन्ना में हुए कार्यक्रम में श्री राजन स्वामी जी व अन्य प्रचारकों द्वारा तारतम वाणी की चर्चा हुई जिसमें बड़ी संख्या में सुंदरसाथ ने भाग लेकर आत्म-कल्याण किया।

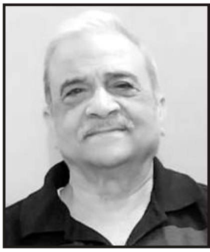

कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

जागनी रास

प्रत्येक वर्ष में पन्ना जी में आश्विन मास में शरद पूर्णिमा बड़े धूमधाम से मनाई जाती है। ऐसी मान्यता है कि योगमाया में अखण्ड महारास शरद पूर्णिमा को ही खेली गई थी।

जागनी रास से हमारा क्या आशय है? सामान्यतः हम रास का अर्थ केवल गाने-बजाने और नाचने से लेते हैं, लेकिन ऐसा नहीं है। वास्तव में, इस जागनी के ब्रह्मांड में चौथे दिन से छठे दिन तक जो लीला चल रही है, वही जागनी रास है। हां, योगमाया में खेली गई रास और इस कालमाया में खेली जा रही रास में कई मूलभूत अन्तर हैं। कई बार हमें ऐसा प्रतीत होता है कि योगमाया में खेली जाने वाली रास, जागनी रास से कहीं अधिक आनन्दमयी और सुखकारी थी, क्योंकि वहां श्री कृष्ण जी का अति सुन्दर किशोर स्वरुप सखियों को आंखों से दिखाई देता था। भले ही परमधाम का ज्ञान नहीं था, फिर भी सखियां श्री कृष्ण जी के पीछे दीवानी थी। वहां भूख-प्यास, वृद्धावस्था, रोग एवं मृत्यु किसी प्रकार का कष्ट नहीं था। आंखों से दिखाई देने वाले स्वरुप से प्रेम करना भी सरल होता है। लेकिन काल माया की जागनी रास की इस लीला में स्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। अक्षरातीत श्री राज जी हमारी प्राणनली से भी ज्यादा नजदीक हैं, परंतु इन आंखों से दिखाई नहीं देते। निःसंदेह यहां कठिनाईयां अधिक हैं, परंतु इसके साथ ही लाभ भी अधिक हैं। योगमाया में रास की लीला में जब श्री कृष्ण जी का स्वरुप अदृश्य हो जाता है तो सखियां बिलखती हैं और उन्हें सारे वृन्दावन में ढूंढती है। परंतु तारतम वाणी के प्रकाश में आज हम कह सकते हैं-

ऊपर तले अर्स न कह्या, अर्स कह्या मोमिन कलूब।

अर्थात् हमारी आत्मा का दिल ही अक्षरातीत घनी का धाम है। हमारे धाम हृदय में ही २५ पक्ष और युगल स्वरुप बसते हैं तथा हमें कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। हमें आंखें खोलने की नहीं बल्कि बंद कर इस शरीर और संसार से परे होकर परात्म का श्रृंगार सजना है - फिर देखिये, हमें यहां बैठे-बैठे सम्पूर्ण परमधाम दिखाई देने लगेगा। इसे ही कहते हैं जागनी रास!

उल्लेखनीय है कि योगमाया के ब्रह्माण्ड में जो रास खेली गई थी, उसमें केवल रामतें थी। परंतु आज हम छठे दिन के लीला में खिलवत, परिक्रमा, सागर और सिनगार के माध्यम से श्री राज जी के एक-एक अंग में होने वाली

लीला को प्रत्यक्षतः चितवनी द्वारा देख सकते हैं। अब हमें बिलखने के आवश्यकता नहीं हैं, धामधनी हर पल हमारे साथ हैं। परंतु इसके लिये हमें हमारे जीव को निर्मल कर विरह की भट्टी में जलाना होगा।

यह हांसी की लीला ही तो है कि जो हमारे सबसे पास है, वह हमें सबसे दूर लग रहा हैं। हमें विश्वास नहीं होता कि अक्षरातीत श्री राज जी पल-पल हमारे साथ हैं जबकि वाणी कहती है-

हम को खेल दिखावन काज, हमसे आगे आये श्री राज।

वे हमारे दिल में बैठे हैं और हम उन्हें बाहर ढूंढ़ रहे हैं। हमें याद रखना होगा कि यदि हमने उन्हें अपनी आत्मा के धाम हृदय में नहीं देखा, उनसे बातें नहीं की तथा उनकी बातें नहीं सुनी तो हमारा खेल में आना व्यर्थ है। योगमाया की रास में तो केवल आत्मायें पहुंची थी लेकिन इस जागनी रास में जीव सृष्टि सहित सबको अधिकार दे दिया गिया है कि वे अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को रिझायें और उन्हें अपने धाम हृदय में विराजमान करें।

जैसाकि हम सबको विदित है कि महारास योगमाया के ब्रह्माण्ड में केवल ब्रह्म में खेली गई थी, जहां कण-कण में आनंद है। परन्तु वहां परमधाम की स्वलीला अद्वैत / वहदत का रस नहीं है। इसके विपरीत इस जागनी रास में धामधनी ने हमें समस्त सुख दे दिया है और हम यहां बैठे-बैठे वहदत, खिलवत तथा हकीकत व मारफत का रस ले सकते हैं। लेकिन यह सुख ऐसी तिजोरी में बंद है जिसकी चाबी हमने स्वयं खो दी है। यह चाबी हमें वाणी के प्रकाश से मिल सकती है। यदि हम चितवनी के द्वारा विरह की अग्नि में जल कर स्वयं को सिद्ध कर दे तो यहां बैठे-बैठे हम परमधाम के २५ पक्षों में भ्रमण कर अक्षरातीत श्री राज जी के दिल में डुबकी लगाकर उनके दिल के हर भेद को जान सकते हैं जो परमधाम में रहते हुए भी संभव नहीं था। हमें यह भी पता चल जायेगा कि हमारे और अक्षरातीत श्री राज जी में कोई अंतर नहीं है, दोनों एक ही तन है- 'रूहें तुम मेरे तन हो।'

लेकिन जब तक मारफत के ये बातें, जिनके लिये यह खेल बना है, हम नहीं जान पाते, तब तक कोई लाभ नहीं है। हमें श्री राज जी को एक देवता समझकर भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। वे हमारे प्रियतम हैं और उनसे प्रेम करना हमारा अधिकार है और जिस दिन उनसे प्रेम हो जायेगा, वे हमारे और हम उनके हो जायेगें। हम जिह्वा से अवश्य उनके बन जाते हैं परंतु हमारी सारी ऊर्जा अपने परिवार के लिये जा रही है। जब हम उन्हें अपना हृदय ही नहीं देना चाहते तो प्राणनली से नजदीक होते हुए भी वे हमें कैसे दिखाई देगें? हम अपने हृदय को श्री राज जी के धाम बनाने की कसौटी पर खड़ा सिद्ध नहीं कर पा रहे हैं। ब्रज में गोपियों ने श्री कृष्ण की बांसुरी बजते ही शरीर छोड़ दिया था परंतु आज श्री कुलजम वाणी के बांसुरी पिछले तीन सौ वर्षों से अधिक समय (वि.स. १७१२) से बज रही है, लेकिन हमें सुनाई नहीं दे रही है। शायद हम बांस की बांसुरी बजने के प्रतीक्षा कर रहे हैं। कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह जागनी ब्रह्माण्ड नहीं बल्कि शयन ब्रह्माण्ड बन गया है। हमें ब्रज की तरह धामधनी को केन्द्र में रखकर प्रेम और समर्पण की उस अवस्था में आना पड़ेगा जो ब्रज से रास में जाते समय गोपियों की थी तभी हम आत्म जागृति के अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल होंगे।

अक्षरातीत के मूल स्वरुप और लीला के स्वरुप में अंतर

(1) अक्षरातीत का मूल स्वरुप कौन है ?

बिच बैठक 'राज' श्यामाजी, साथ गिरदवाए घेर।
साजे सकल सिंगार, सोभा क्यों कहूं इन बेर।।

(2) परमधाम में कौन-कौन है ?

'श्रीराज' और श्यामाजी, ए दोनों जुगल किशोर।
रूहें रहे दरगाह में, ए तीनों स्वरुप एक न और।।

(3) अक्षरातीत कौन है और परमधाम कहां है ?

बेहद सुख पार बेहद घर, बेहद पार 'श्रीराजजी'।
अक्षरातीत सुख अखण्ड देवे, मै जगाऊं तुमारे काजजी।।

उपरोक्त चौपाइयों का यही सार है कि एक यही परम सत्य है कि अक्षरातीत का मूल स्वरुप केवल एक 'श्री राज जी' ही हैं अन्य कोई नहीं, जिनको दिव्य तारतम ब्रह्मवाणी में 'श्री प्राणनाथ जी' भी सम्बोधित किया गया है।

(4) श्री प्राणनाथ जी कौन है ?

कहे सुन्दरबाई अक्षरातीत से, खेल में आया साथ।
दोए सुपन ए तीसरा, देखाया 'प्राणनाथ'।।

या कुरान या पुराण, ए कागद दोऊ परवान।
याके मगज मायने हम पास, अंदर आए के खोले 'प्राणनाथ'।।

वालाजी रे एम तमे मोसूं कां करो, मारा हो 'प्राणनाथ'।
आवी करूं तमसूं गुझड़ी, मारी बीतक नी जे बात।।

इसका सीधा-सा अर्थ यही होता है कि अक्षरातीत का मूल स्वरुप 'श्री राज जी' ही हमारे 'प्राणनाथ' है और कोई नहीं।

अक्षरातीत के मूल स्वरुप को इसी आधार पर ही दिव्य तारतम ब्रह्मवाणी में खेल के सभी ष्जोश/आवेशष स्वरुप श्री कृष्ण जी, श्री बांके बिहारी जी, मुहम्मद साहेब, श्री देवचन्द्र जी और श्री मेहेराज जी के तनों को केवल लीला के समय 'श्री राज जी या श्री प्राणनाथ जी' करके सम्बोधन किया गया है पर अब नहीं।

इस छठे दिन की मोमिनों/सुन्दरसाथ का लीला में वो 'जोश/आवेश' स्वरुप 'श्री राज जी या श्री प्राणनाथ जी' अपने पांचों दिन का प्रत्यक्ष ब्रह्मलीला को परिपूर्ण कर अब परोक्ष/सूक्ष्म रूप में इस जागनी ब्रह्माण्ड के मूल मिलावा श्री गुम्मट जी में विराजमान है जिनकी दिव्य मेहेर के द्वारा ही इस छठे दिन की जागनी लीला सर्व सुन्दरसाथ के माध्यम से संचालित हो रही है।

(५) श्री श्यामा जी को दिव्य दर्शन देने वाले और दिव्य तारतम ब्रह्मज्ञान लेकर आने वाले कौन हैं ?

तारतम लई 'श्रीराज' पधारया, थयूं ते सर्व ने जान।
सखियों कहे अमे आवी ने मलसुं, मलिया ते मूल एंधान।।

अर्थात् श्री श्यामा जी को दिव्य दर्शन देकर अलौकिक तारतम ब्रह्मज्ञान देने वाले सिर्फ और सिर्फ केवल एक अक्षरातीत श्री राज जी/श्री प्राणनाथ जी ही है और कोई नहीं।

(६) श्री जी साहेब जी कौन और किसको कहा गया है ?

मऊ सेती परना मिने, पहुंचे 'श्रीजी साहिब'।
मझली ने पहिचानिया, सेवा करी तब।।

आए महाराज उत से, रसोई के बखत।
अस्नान कर ठाड़े हते, 'श्रीजी साहेबजी' तित।।

ताकी पाती की जवाब, लिखी 'श्रीजी साहिब'।
तुम दूर कौन किताब से, तहक़ीक़ किया अब।।

इसका अर्थ है कि 'श्री जी साहेब जी' पांचवें दिन के श्री मेहेराज जी के जीव/तन से हो रही लीला के स्वरुप को सम्बोधन किया गया है, अक्षरातीत के मूल स्वरुप को नहीं।

(७) श्री कृष्ण जी और श्री बांके बिहारी जी कौन हैं और कहां है ?

कंस के बन्ध वसुदेव देवकी, इत आई सुरत चत्रभुज की।
सुरत विष्णु की चत्रभुज जोए, दियो दर्शन वसुदेव को सोए।।

अवतार एक श्री कृष्ण का, मूल मथुरा प्रगटया जेह।
दीदार वसुदेव देवकी को, दिया चत्रभुज एह।।

नाम तत्व कह्यं श्री कृष्णजी, जे रमे अखण्ड ब्रज रास।
रास लीला श्री कृष्ण गोपी, खेले सदा अविनास।।

इसका अर्थ है कि द्वापर युग के अंत में मथुरा के कारागृह में भगवान विष्णु का चतुर्भुज रूप में अवतार पहले हुआ था, फिर बाद में दो भुज वाले शिशु के रूप में परिणत हुए (इसीलिए जन्माष्टमी हमारे काम का नहीं है) जिसे लेकर वसुदेव जी गोकुल में नन्दबाबा के यहां ले गए और तत्पश्चात्

मूल सुरत अक्षर की जेह, जिन चाहया देखूं प्रेम सनेह।
सो सुरत धनी को ले आवेश, नन्द घर कियो प्रवेश।।

दोए भुजा स्वरूप जो स्याम, आतम अक्षर जोश धनी धाम।
यों खेल देख्या सैयां सबन, हम खेले धनी भेले आनंद घन।।

अग्यारे बरस और बावन दिन, ता पीछे पोहोंचे वृन्दावन।

नन्दबाबा के घर में प्रवेश करने के बाद ही उस विष्णु अवतार श्री कृष्ण जी के जीव/तन में अक्षरातीत का दिव्य शक्ति जोश/आवेश और अक्षर ब्रह्म का सुरता/आत्मा का प्रवेश हुआ और हम सखियों ने अपने प्रियतम धनी के साथ ११ वर्ष और ५२ दिन तक प्रेममयी लीला की।

उसके बाद ब्रज का ब्रह्माण्ड असामयिक लय को प्राप्त हो गया। तब अक्षरातीत धामधनी ने उस ब्रज मण्डल में अवतार धारण किया हुआ विष्णु अवतार श्री कृष्ण के जीव सहित वहां के सम्पूर्ण जीवों और लीला को बेहद मण्डल के अखण्ड गोलोक धाम में अखण्डित कर दिया और फिर हम सब सखियाँ अपने प्रियतम धनी अक्षरतीत और अक्षर ब्रह्म की आत्मा के साथ बेहद मण्डल में योगमाया द्वारा रचित दिव्य अखण्ड वृन्दावन में पहुंच गए और वहां अलौकिक महारास की लीला की इस लीला और दिव्य स्वरूपों को भी अक्षरातीत धामधनी ने बेहद मण्डल का अखण्ड वृन्दावन धाम में अखण्डित कर दिया।

इससे आगे किसी भी श्री कृष्ण, राधा और गोपियों का नाम, स्वरुप, सिंगार, लीला और धाम का वर्णन नहीं है अक्षरातीत परमधाम की और मूल स्वरुप की बात तो बहुत दूर। इसीलिए श्री कृष्ण जी अक्षरातीत कदापि नहीं हैं।

अतः श्री 'कृष्ण जी की त्रिधा लीला' नहीं बल्कि वास्तव में 'श्री कृष्ण जी के तन से हुई त्रिधा शक्तियों (क्षर (विष्णु= ११२ वर्ष), अक्षर (गोलोकी=७+४=११ दिन) और अक्षरातीत (श्री राज जी=११ वर्ष और ५२ दिन) की लीला' है जो परम सत्य और सैद्धान्तिक है।

श्री कृष्ण जी, श्री बांके बिहारी जी, मुहम्मद साहब, श्री देवचन्द्र जी और श्री मेहेराज जी की समस्त लीला स्वरूपों की बातें है मूल स्वरुप की नहीं। अक्षरातीत परमधाम की अपनी मूल लीला में न तो श्री कृष्ण जी है, न श्री बांके बिहारी जी, न ही मुहम्मद साहब, श्री देवचन्द्र जी और न ही श्री मेहेराज जी बल्कि वहां तो केवल प्रियतम धामधनी श्री राज जी, श्री श्यामा जी और हम सखियाँ ही थी, अभी भी हैं और सदा रहेंगी।

इसीलिए, अपने प्रियतम धामधनी अक्षरातीत श्री राज जी/श्री प्राणनाथ जी के दिव्य तारतम ब्रह्मवाणी/ब्रह्मज्ञान का सही और सत्य अर्थों में अध्ययन, मनन, चिंतन, मन्थन और आत्मसात् करते हुए इन सभी लीला के स्वरूपों को सत्य तथ्यों के साथ जानते और समझते हुए केवल अपने प्रियतम धामधनी अक्षरातीत के मूल

स्वरुप 'श्री राज जी', अपने मूल स्वरुप 'परात्म', अपनी मूल लीला 'दिव्य २५ पक्ष परमधाम का अष्ट प्रहर का' और मूल घर 'अक्षरातीत परमधाम' का स्मरण, चिंतन और ध्यान करें।

जो मूल स्वरुप है अपने, जाको कहिए पर आतम।
सो पर आतम संग लेय के, विलसीए संग खसम।।

केवल इसी एक साधन से ही आत्मा की जाग्रति होगी अन्यथा ऐसे ४०० वर्ष और कितने ही निकल जायेंगे और फिर बाद में अपने प्रियतम धामधनी के सम्मुख और भी जबरदस्त हांसी का पात्र बनेंगे।

(साभार : निजानंद तारतम ब्रह्मज्ञान)

परब्रह्म अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की कृपा से हिमालय की गोद के सुरम्य वातावरण में, वीरता की भूमि गोरखा (नेपाल) में दिनांक 10 से 12 अक्टूबर, 2025 तक श्री राज निजानन्द मन्दिर का स्वर्ण महोत्सव हर्षोल्लास से मनाया गया। इस अवसर पर श्री राजन स्वामी जी के साथ–साथ श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ के अन्य आचार्य व प्रचारक गण भी उपस्थित रहे, जिनके माध्यम से उपस्थित सुंदर साथ को धर्म, अध्यात्म, योग, निजानन्द, बाल संस्कार, व्यसन मुक्ति आदि विषयों पर चर्चा का लाभ मिला।

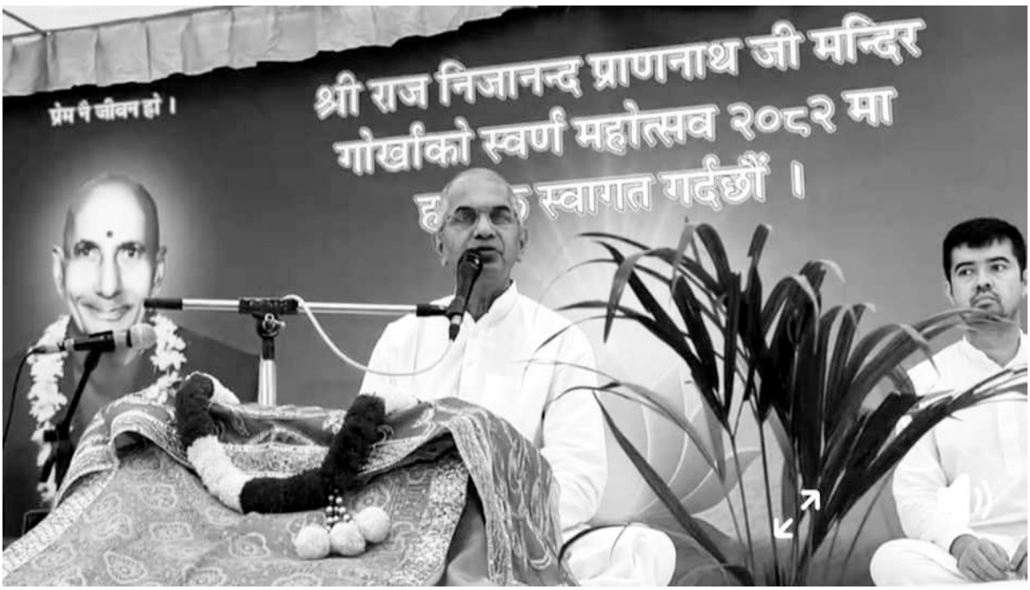

डॉ. नैन्सी, जयपुर

प्रेम के बिना आध्यात्मिक यात्रा अधूरी

व्यक्ति की दो प्रकार की यात्राएं जीवन में साथ-साथ चलती है। एक आध्यात्मिक यात्रा और भौतिक यात्रा। आध्यात्मिक और धार्मिक व्यक्ति होने में भी अन्तर है। व्यक्ति अगर गुणों से धार्मिक है लेकिन उसे ना स्वयं की पहचान है और ना ही उस परमात्मा की तो उसकी आध्यात्मिक यात्रा अभी शुरू ही नहीं हुई है। मनुष्य को जब पहचान हो जाती है कि वह कौन है, किस कारण से धरती पर उसका जन्म हुआ है और उसे जाना कहाँ है; तब वह अपनी भौतिक और आध्यात्मिक यात्रा से संतुलन बना पाता है।

अगर व्यक्ति आध्यात्मिक नहीं है तो वह अपना जीवन भोग विलास में बिताकर जीवन का अन्त कर लेता है। जीवन में दुख-सुख लगातार चलते रहते हैं। कोई भी व्यक्ति पूर्ण रूप से जीवन में सुखी हमेशा नहीं रहता और ना ही कोई व्यक्ति हमेशा, दुखमय जीवन बिताता है वह जीवन की गाड़ी के दो पहिये हैं जो व्यक्ति को अपने कर्म के अनुसार भोगने ही पड़ते हैं। लेकिन व्यक्ति अगर आध्यात्मिक हो जाता है, तो दुख-सुख का प्रभाव उसके जीवनपर कम पड़ता है, क्योंकि वह उसे परमात्मा की दी हुई देन समझकर स्वीकार कर लेता है। जहां तक मेरा अनुभव के आध्यात्मिक व्यक्ति के जीवन में दुख ज्यादा आते हैं। क्योंकि वह परमात्मा के निकट होता है और परमात्मा उसकी परीक्षा लगातार लेते रहते हैं। भौतिक सुख उसे मिले या ना मिले लेकिन वह परमात्मा को अपने जीवन में हर पल महसूस करता है, इसलिए सुख और दुख का प्रभाव उसके जीवन में कम ही पड़ता है।

ओशो ने कहा कि काम में भाव आनन्य को ढूंढ़े और फल की आकांक्षा न करें तो जीवन सुखमयी हो जायेगा। लेकिन मनुष्य के पास जो है उसके दुख ढूंढ़ता है और भविष्य में सुख ढूंढ़ता है, लेकिन व्यक्ति वर्तमान में ही सुख ढूंढ़ ले तो भविष्य में सुख नहीं ढूंढ़ना पड़ेगा। काम आपकी रचनात्मक ऊर्जा की अभिव्यक्ति है। हर काम ऊर्जा का नृत्य है, गीत हैं, इस भाव से करोगे तो कर्म ही योग बन जायेगा। जीवन को आप खेल की तरह लें। खेल में चाहे जीते या हारे आप फिर भी इसका आनन्द लेते हैं। घटनाओं और परिस्थितियों से सबक लें फिर आगे करें। कोई भी महान् व्यक्तित्व को आप देखोगे तो संघर्षमयी जीवन के बाद ही सफलता मिलती है।

सुन्दरसाथ धर्म पर बात करना आसान है, लेकिन धर्म में जी लेना उतना ही कठिन है। दुनिया में असंभव कार्य कोई नहीं है, जब तक धर्म को जीया ना जाये तो वो बहुत कठिन लगता है। लेकिन यदि एक बार हम धर्म को जी ले, तो फिर वह उस मस्त साईकिल सवार की तरह हैं, जो अपनी मर्जी से लहराते हुए चलता है। सबसे अच्छी बात यह हे कि राजजी ने हमें बेहद वाणी दी है और ब्रह्मसृष्टि की उपमा दी है। हमारा धर्म बेशकीमती हीरे की तरह है। जिसे हीरे का पता नहीं वो जिन्दगी भर पत्थर कंकर ही बीनेगा। पहले तो हमारी तैयारी यह हो कि हम जौहरी की तरह ऐसी नजर बना ले कि धर्म को हीरे की तरह तराश लें, ताकि हमें राज जी द्वारा दिया गया ज्ञान समझ आ जाये।

वाणी मेरे पिउ की, न्यारी जो संसार।
निराकार के पार थे, तिन पार के भी पार।।

वाणी हमारी जिन्दगी में परिवर्तन लाती है। अपनी जिन्दगी में परिवर्तन लाना ही सफलता की सबसे बड़ी कुंजी है। स्वयं के अन्दर बदलाव लाकर आप सफलता की हर मंजिल हासिल कर सकते हैं। खुद में बदलाव लाना किसी के लिए भी एक बहुत बड़ी चुनौती होती है। दूसरों को सिखाना और दूसरों को बदलना आसान होता है। पर खुद को बदलना बहुत मुश्किल काम है। पर आप अपनी ताकत और क्षमता से खुद को बदल सकते हैं।

एक ऋषि प्रतिदिन लौटा मांजते थे। एक शिष्य ने कहा गुरुजी लौटे में रोज मांजने की क्या जरूरत है, सप्ताह में एक बार ही मांज लिया करें। ऋषि ने कहा बात तो सही है, उसके बाद उन्होंने नहीं मांजा। एक सप्ताह बाद शिष्य को लौटा साफ करने के लिए कहा तो शिष्य बहुत देर मांजने के बाद भी पहले वाली चमक लौटे में नहीं ला सका। तब ऋषि बोले जब तक लौटे को रोज मांजा जाता रहा तब तक यह रोज चमकता रहा। ऐसे ही साधक होता है, अगर वह राजे मन को साफ न करे तो मन संसारी विचारों और विकारों से अपनी चमक खो देता है। इसलिए इसको प्रतिदिन सेवा, सत्संग, संकीर्तन, स्मरण से चमकाना चाहिए। यदि एक दिन भी अभ्यास छोड़ा तो चमक फीकी पड़ जायेगी।

व्यावहारिक ज्ञान हमें संसार में जीना सिखाता है और आध्यत्मिक ज्ञान हमें भीतर जुड़ना सिखाता है। जीवन में भक्ति और भौतिकता का संतुलन बनाए रखना चाहिए। संयम हर जगह जरूरी है। आप संसार से भी परिचय रखें और संसार बनाने वाले को भी कभी न भूलें।

जैसे ही आपने अपने भीतर राजजी को जान लिया फिर आपके कर्म में निष्कामता आ जायेगी और आपकी वाणी में विश्वसनीयता तथा प्रभाव आ जायेगा। स्वयं बाहर की तरफ नहीं अपनी अन्तात्र्मा में तलाश करें कि राज-श्यामा जी हमारे हृदय में कहाँ विराजते हैं। और यह कहकर उनकी अगवानी करें :

अरश तुम्हारा मेरा दिल है, तुम आए करो आराम।
सेज बिछाई रूच-रूच के, ये ही तुम्हारा विश्राम।।

सुन्दरसाथ अर्श दिल आपका कब बनेगा जब इसमें प्रेम और इश्क होगा। केवल दिखावे से या कर्मकाण्ड करके हम परमात्मा को नहीं पा सकते। इसका एक बहुत अच्छा उदाहरण सच्ची घटना के द्वारा जाना जा सकता है। जगन्नाथ पुरी में जगन्नाथ जी के मन्दिर में एक बुढ़िया रोज आती थी। उसे ठाकुर जी से अत्यन्त प्रेम था, लेकिन वह गरीब थी। ठाकुर जी उसके घर प्रातः रोज आते और उसके हाथ से बनी खिचड़ी खाकर फिर मन्दिर में विराजमान हो जाते। वहां भी उन्हें ५६ भागे लगाए जाते थे। लेकिन बुढ़िया का प्रेम इतना ज्यादा था कि वह उसकी खिचड़ी खाकर ही संतुष्ट होते थे। एक दिन उसे खिचड़ी बनाने में देर हो गई।

उसने सोचा ठाकुर जी आते ही होंगे। वह खिचड़ी चूल्हे पर चलाकर नित्य क्रिया क्रम करने लगी। दातौन कर ही रही थे कि उसे खिचड़ी जलने की खुशबू आने लगी। उसे लगा ठाकुर जी आने वाले हैं। खिचड़ी जल गई तो क्या खिलाऊंगी तुरन्त रसोई में गई अपनी दातौन वाली लकड़ी से ही खिचड़ी हिलाने लगी। यह सब बहार खड़ा एक साधु देख रहा था। उसने बुढ़िया को डांटा कि क्या ठाकुर जी का भोग ऐसे बनाते हैं। वह बहुत सीधी थी। उसने कहा आप बताये ठाकुर जी का भोग कैसे बनाते हैं। नदी में जाकर स्नान करके, वहां से जल लाकर, चूल्हा चौकी लेपकर खुद तरीके से भोग बना। बुढ़िया ने कहा ठीक है, मैं ऐसे ही करूँगी। अगले दिन उसने इसी तरह किया लेकिन शरीर बुढ़ा और कमजोर होने के कारण ऐसा करने में समय लग गया और ठाकुर जी के मन्दिर का समय भी हो गया था।

ठाकुर जी ने बुढ़िया से प्रश्न किया कि आज देर क्यों हो गई, तो बुढ़िया ने कहा कि साधु जी ने ऐसा-ऐसा कहा था। तब ठाकुर जी ने उसे समझाया तुम जैसे प्रेम से भोजन बनाती हो मुझे ऐसा ही अच्छा लगता है। वह सिर्फ प्रेम से कर्म करती थी, इसलिए ठाकुर जी ने ही उसका नाम कर्माबाई रखा था।

इस दिन ठाकुर जी को मन्दिर जाने से देर हो गई। पण्डितों ने ठाकुर जी को वहां नहीं देखा और बाद में आने पर ठाकुर जी से पूछा आप कहां थे तब ठाकुर जी ने बताया कि मैं कर्माबाई की खिचड़ी के बिना नहीं रह सकता, उस दिन क्योंकि ठाकुर जी के मुख पर खिचड़ी लगी हुई थी, जल्दी से वह आचमन करना भूल गए थे। तभी से कर्माबाई तो चली गई लेकिन जगन्नाथपुरी में सुबह सबसे पहले ठाकुरजी को खिचड़ी खिलाई जाती है। स्पष्ट है परमात्मा को आपका प्रेम चाहिए, अगर हृदय में प्रेम नहीं है तो आप सेवा-पूजा, नित्य कर्म कर रहे हैं, अपना दिल अर्श कैसे बनेगा? दिल को अर्श बनाने के लिए कर्म में प्रेम इश्क का भाव लाना जरूरी है, तब परमात्मा आपसे दूर नहीं है। वाणी भी कहती है :

प्रेम प्रेम सब कोए कहे, प्रेम चीन्हे कोय।
आठ पहर भीना रहे, प्रेम कहावे सोय।।

आचार्य सुभाष, सरसावा

क्या है भगवान् श्री कृष्ण जी का गोवर्धन पर्वत उठाना ? यह गोवर्धन पर्वत क्या है ?

आज संसार में प्रत्येक मनुष्य यह कह देता है कि यह तो पाखंडी है, लेकिन पाखंड कहते किसको हैं? इसको समझना होगा। आज का मानव भगवान को कभी राम शब्द से पुकारता है तो कभी कृष्ण शब्द से पुकारता है। यह तो यथार्थ है कि परमात्मा के अनन्त नाम हैं, उसको किसी नाम से पुकारो, है तो वह परमात्मा ही। परमात्मा को जिन जिन रूपों में पुकारा जाता है उन्हीं रूपों में प्रकट हो रहा है, लेकिन जब मानव रूढ़िवादी बन जाता है और रूढ़िवादी बन करके उसके द्वारा उस महान योगेश्वर श्री कृष्ण को परमात्मा मान लिया जाता है तो उस महान आत्मा पर लांछन लगाकर अपने स्वार्थ को पूरा करना चाहता है। यह हमारी मूर्खता नहीं तो और क्या है ? यह हमारी अज्ञानता नहीं तो और क्या है? जिन्होंने अपने दर्शनों को, शास्त्रों को, वेदों को नहीं जाना, वेद पर विचार नहीं किया, यह उनकी अज्ञानता नहीं तो और क्या है?

हम उन श्री कृष्ण जैसे अनेकों आचार्यों और योगियों के कितने बड़े आभारी हैं जिन्होंने १६ कलाओं को जाना और समय के अनुसार नीति को बरतते हुए संसार का पुनरुत्थान किया। मानव को विचार करना चाहिए कि महाभारत का इतना संग्राम केवल श्री कृष्ण का ही कर्त्तव्य था। जैसी राजनीति देखी, जैसा समय देखा, उसके अनुकूल व्यवहार किया। यह उन्हीं की योग्यता थी, क्योंकि महाभारत काल में भौतिकता बहुत बढ़ गई थी। नाना प्रकार के यंत्र बन गए थे। भौतिक विज्ञान से ऐसी यंत्रों का निर्माण कर एक दूसरे को नष्ट करने की योजनाएं बनाई जा रही थीं। उन्हीं श्री कृष्ण जी ने विनाशकारी युद्ध को रोकने का यत्न किया, परन्तु जब कुछ नहीं हुआ तब महाभारत का युद्ध कराया। कितना विशाल संग्राम आज का मानव चकित होता चला जा रहा है। इस संग्राम में सभी बुद्धिमान और वैज्ञानिक समाप्त हो गए। परंतु क्या करें जैसा मानव का समय होता है, उसी के अनुकूल वातावरण बन जाता है।

परन्तु साधारण मनुष्य के अन्तर्मन में आने वाला विषय नहीं यह तो केवल परमात्मा की महानता है। जिसके आदेश से यह कार्य चल रहा है। मानव तो यत्न कर सकता है। वह भी सीमित, असीमित नहीं। परमात्मा इतना अनन्त है कि वह सभी कुछ समय के अनुकूल करा देता है। उस समय महान योगेश्वर श्रीकृष्ण जी ने एक ऐसे यंत्र का निर्माण किया था कि जो या तो त्रेता काल में लक्ष्मण जानते थे या द्वापर में केवल श्री कृष्ण जानते थे। महाभारत के संग्राम का जितना मैदान था उसके चारों ओर एक यान्त्रिक रेखा का श्री कृष्ण जी द्वारा प्रयोग किया गया था, जिसके कारण संग्राम के यंत्रों का दूषित प्रभाव उस रेखा से बाहर न जा सका अर्थात् संग्राम भूमि से बाहर अन्य प्राणियों पर उन यंत्रों का कोई दूषित प्रभाव नहीं हुआ था। यहां तक कि आकाश के रास्ते से भी यंत्रों का दुष्प्रभाव अन्य प्राणियों पर और पृथ्वी पर न पड़े इस प्रकार का प्रबंध भी श्री कृष्ण जी द्वारा किया गया था। इसको स्वानमाम की रेखा कहते हैं।

यह योग्यता और महान वैज्ञानिकता है। जिसमें १६ कलाओं को जाना जाता है। इसी प्रकार लक्ष्मण रेखा त्रेता काल में सीता जी की कुटिया के चारों तरफ लक्ष्मण जी द्वारा रेखा का निर्माण किया था। जैसे परमात्मा अनन्त है और उसके गुण अनन्त हैं ऐसे ही महान व्यक्ति अनन्त गुणों के स्वामी होते हैं। फिर भी श्रीकृष्ण जी ऐसे नहीं थे कि जो चाहें सो कर दें।

उनको कुछ लोग भगवान कहने लगे परन्तु उनको भगवान होने का कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। वह पूर्णब्रह्म नहीं माने जा सकते। क्योंकि किसी भी ऋषि मंडल द्वारा ऐसा सिद्ध नहीं किया गया है। यदि आज योगेश्वर कृष्ण जी को भगवान के रूप में मान लेते हैं या पूर्णब्रह्म स्वीकार कर लेते हैं तो परब्रह्म की महत्ता में भी विच्छेद आ जाता है, क्योंकि परमात्मा का नियम यह नहीं कहता। यदि परमात्मा स्वयं अपने ही नियमों को तोड़ने लगे तो उनकी महत्ता ही नष्ट हो जाती है। दूसरे सर्वशक्तिमान परमात्मा को जन्म धारण करने की क्या आवश्यकता है? इस प्रकार अवतारवाद निरर्थक है। परमात्मा तो सच्चिदानन्द स्वरूप रहते हुए भी जिस वस्तु की रचना कर देते हैं उसका नाश भी कर सकते। क्योंकि परमात्मा अपनी सत्ता से सर्वशक्तिमान है।

वास्तव में मानव ने इस रहस्य को जाना नहीं। भगवान श्रीकृष्ण जी योगेश्वर थे, महान एवं विचित्र थे। अपने समय के बहुत बड़े बुद्धिमान थे। अपने समय में वेदों के प्रकांड पंडित थे। श्री कृष्ण जी का ऐसा प्रबल आत्मिक बल था कि दूसरों का आत्मा उनके आत्मिक बल से प्रभावित होकर उनके ही आदेशों पर चलने लगता था। योगेश्वर होने के नाते ही उन्होंने अर्जुन को अपना पंचमहाभूत मानव शरीर में रहते हुए विराट रूप दिखा दिया था इससे दर्शक चकित हो जाता है। वास्तव में योगेश्वर श्री कृष्ण के जीवन को वास्तविक रूप में जाना ही नहीं। योगेश्वर श्री कृष्ण जी की योग्यता एवं उनके चरित्र को नाना प्रकार से विकृत कर दिया है अनेक प्रकार की भ्रांतियां लोगों ने फैला दी हैं।

षोडश कलाओं के जानने वाले भगवान् श्री कृष्ण जी ने अपने जीवन में किसी प्रकार का पाप कर्म नहीं किया, वह इतने महान थे। क्यों नहीं किया? यह प्रायः होता है कि जब मानव संसार में आता है तो पाप भी करता है और पुण्य भी करता है। क्योंकि यह शरीर ही उसे पाप-पुण्य कर्म करने के लिए प्राप्त होता है। भगवान् श्री कृष्ण जी इतने महान थे। अपने कार्यों में इतने दक्ष थे, ज्ञान और विज्ञान में इतने पारंगत थे कि वह किसी कार्य को करने के पश्चात् उस पर पश्चाताप नहीं करते थे। नम्रता उनकी प्रतिभा थी।

श्री कृष्ण जी विज्ञान में भ्रमण करते थे। कितना विज्ञान उनके समीप था, वह जानते थे कि पृथ्वी में क्या है? अन्तरिक्ष के परमाणु क्या कर रहे हैं और कह रहे हैं? जो मानव विज्ञान के आश्रित होकर के वायुमंडल की तरंगों को जानने लगता है वही तो संसार में विज्ञानवेत्ता कहलाया जाता है। भगवान् श्री कृष्ण जी में अलौकिकवाद था। इसी प्रकार भारतवर्ष में अनेक महापुरुष उत्पन्न होते रहे हैं। उन महापुरुषों के आगमन से एक विचित्र वाद छाता चला आया है। परंपरा से वैदिक परम्परा को उन्नत बनाने के लिए मानव का परम धर्म हो जाता है क्योंकि मानव की जो मीमांसा है वह मननशील के आधार पर निर्धारित है, क्योंकि मानव वही कहलाता है जो मननशील होता है, जिसके मन का कोई संकलन होता है, उसी के जीवन में महानता की एक ज्योति प्रकट होती रहती है। जब हम प्रत्येक वाक्य को अपनाने का अथवा मनन करने का साधन बनाएंगे तो हमारा जीवन वास्तविक ज्योतिमय प्रतीत होने लगता है।

श्री कृष्ण जी के जीवन में सदैव ज्ञानाग्नि प्रदीप्त रहती थी। उनके पठन-पाठन का कार्यक्रम था, मनन करने की जो पद्धतियां थीं वह विचित्र में सदैव परिणत रही हैं। उन पद्धतियों को अपनाने के लिए आज हम लालायित रहते हैं। कि आज पुनः उन पद्धतियों को अपनाया जाए। उन पद्धतियों के आधार पर ज्ञान और विज्ञान की पुनः विवेचना की जाए। उस विज्ञान को पुनः लाना चाहिए जिस विज्ञान को जानकर के श्री कृष्ण जी का पाठ्यक्रम सदा विचित्र रहा है।

श्री कृष्ण जी ने धर्म और मानवता की रक्षा करना अपना परम उद्देश्य माना, क्योंकि जिस राजा के राष्ट्र धर्म और मानवता की रक्षा नहीं होती उस राष्ट्र और पद्धतियों कदापि नहीं चुनना चाहिए। श्री कृष्ण जी ने एक वाक्य कहा था कि जहां समाज में गौ की रक्षा होती है गौ नाम के पशुओं की रक्षा करनी है।श्गोश नाम की इंद्रियों की रक्षा करनी है। जिससे कि राष्ट्रीय विचारधारा और मानव पद्धति को विलक्षण बनाना है। श्री कृष्ण जी एक ध्वनि किया करते थे उसी ध्वनि के आधार पर मानो एक नाद होता था और गौएँ प्रसन्न होकर के दूध देने के लिए तत्पर हो जाती थीं ।वह जब प्रसन्न हो जाती थीं तो उस समय उनके दुग्ध को पान किया जाता था। जब पशु प्रसन्न होकर के दुग्ध को देता है तो स्वामी के लिए बुद्धिवर्धक होता है। रक्तवर्धक होता है।

श्री कृष्ण ने गायों को प्रसन्न करने के बिंदु पर जोर दिया। इसके माध्यम से गायों की रक्षा होती रही। गायों की रक्षा करना उनका परम कर्त्तव्य था। क्योंकि उससे राष्ट्रीय परंपरा ऊंची बनती है। राष्ट्र में दूध देने वाला पशु है, उसी से मानव की बुद्धि ऊंची बनती है। मानव की बुद्धि में उर्ध्व गति आती है। ऐसे उत्तम पशु जिस राजा के राज में हों उनकी रक्षा करना यह सब का परम कर्त्तव्य हो जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण जी कहा करते थे कि प्रत्येक घर में घृत रहना चाहिए। भगवान् श्रीकृष्ण जी की पत्नी रुक्मिणी जी ने उनसे निवेदन किया कि महाराज आप भोजन भी नहीं करते न ही पान करते हो, सदैव ऐसे गोपनीय विषय में संलग्न हो जाते हो कि आपको संसार का ज्ञान ही नहीं रह पाता। (गोपनीय विषयों में लगे रहना ही कृष्ण जी का गोपिकाओं में खेलते रहना मान लिया गया। ना-जानकार, अज्ञानी लोग कहते हैं कि वह हमेशा वेद ऋचाओं में खोए रहते थे।)

कंस का वध करने के पश्चात् श्री कृष्ण जी समुद्र के तट पर विराजमान हो करके तप किया था। १२ वर्षों तक तपस्या करते रहे थे। ऐसे तपस्वी को देवियों में विनोद करने वाला कहा तो यह अज्ञान ही तो है। न जानकर अर्थों का अनर्थ नहीं होना चाहिए। अर्थों का अनर्थ होकर के महापुरुषों के जीवन की आभा समाप्त हो जाती है। महापुरुषों का क्रियाकलाप समाप्त हो जाता है। उसमें रूढ़िवादिता आ जाती है और वह रूढ़ि इन महापुरुषों को हमसे दूर कर देती है जबकि वास्तव में प्रत्येक मानव को गोपिकाओं से विनोद करना चाहिए।

यह गोपिका है क्या?

यह मानव के द्वारा जो संकल्प विकल्प होते हैं, उनका नाम गोपनीय विषय कहा जाता है। जब हम उस गोपनीय विषय के विचार पर रहते हैं, उनका मंथन करते रहते हैं तो एक समय देवता बनने की हमारे द्वारा प्रवृत्ति आई तो देवता बन गए और एक क्षण समय आया तो असुर बन गई। अब विचारना है कि हम असुर बन कर रहें या देवता? इन पर मंथन करना, इन पर विचार करना प्रत्येक मानव कर्त्तव्य है।

जब मानव इन पर विचार करता है तो गोपनीय विषय विचारता है। भगवान् श्रीकृष्ण को कहा जाता है उनके १६००८ गोपियां थी या पत्नियां थीं। वो क्या थीं? भगवान् श्री कृष्ण को १६,००८ वेद की वेद की ऋचाएं कंठस्थ थीं। उन्ही में रमण करते रहते थे। उनका मंथन करते रहते थे। न भोजन की स्मरण रहता था न संसार का स्मरण आता था।

भगवान् श्री कृष्ण ने कहा कि देवी मैं क्या करूं यह जो वेदों का ज्ञान है यह ऐसा गोपनीय विषय है कि मेरा हृदय प्रसन्न होता है और उसे त्यागने के लिए मेरी इच्छा नहीं होती कि मैं आज इस भौतिक परंपरा को त्याग दूँ अथवा यह गोपनीय विषय मेरे हृदय से दूर चला जाए। इस प्रकार वह सदैव गोपनीय विषयों को लेकर विचार में निमग्न रहते थे। नई-नई अनुसंधान करने में संलग्न रहते थे। श्री कृष्णा जी एवं माता रुक्मणी (पति और पत्नी) दोनों एकान्त स्थान में विराजमान होते वेदों की चर्चा प्रारंभ होती रहती, विचार चलता रहता, और उनका हृदय मग्न रहता कि आज वैदिक विचार धाराओं की छत्रछाया में हमारा जीवन परिपक्व हो रहा है।

महाराज कृष्ण मौनधुक (वेदों में इसको सोनधुक भी कहा गया है) नाम की रेखा को जानते थे जो अन्तरिक्ष में छा जाने के बाद सूर्य को ढक लेती थी। अर्जुन की प्रतिज्ञा को पूरा कराने के लिए उसी रेखा को उन्होंने अन्तरिक्ष में बनाया था। जिससे सूर्यास्त होने का दृश्य पैदा हो गया था।

परमात्मा की उपासना करना और प्रत्येक वस्तु पर चिन्तन करना उनका उद्देश्य होता था। वे जिस मार्ग को भी अपनाना चाहते थे उस पर अपना पूर्ण चिन्तन करते थे। उसी में निधारित हो जाते थे। प्राची दिक, दक्षिण दिक, प्रतिची दिक, उदीची डिगक, पृथ्वी कला, वायु कला, अन्तरिक्ष कला, समुद्र कला, सूर्य कला, चन्द्रकला, अग्नि कला, विद्युत कला, मन कला, चक्षु कला, स्त्रोत्र कला, घ्राण कला, यह १६ कलाएं थीं, जिनको भगवान कृष्ण अच्छी प्रकार से जानते थे। किसी किसी विद्वानों के अनुसार १६ कलाएं और भी है जिसका अवलोकन कड़वे सच नामक पुस्तक से देख सकते हैं।

कलाओं का ज्ञान होने के पश्चात् संसार में ब्रह्मवेत्ता, विज्ञान वेत्ता, भौतिक और आध्यात्मिक से विशेष ज्ञान प्राप्त हो सकता था। इन्हीं कलाओं को संसार में जानने वाला महान योगी कहलाता है। इन्हीं १६ कलाओं में रत रहने के कारण श्री कृष्ण जी को १६,००० गोपियों का पति कहा जाता है जो मूर्खता है, अज्ञानता है और अनाड़ीपन है। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम जी १२ कलाओं को ही जानते थे, जबकि भगवान् श्रीकृष्ण जी १६ कलाओं के ज्ञाता थे।

२५ वर्षों तक श्री कृष्ण ने संदीपनी ऋषि के आश्रम में उज्जैन में अध्ययन किया। उसके पश्चात् उनका विवाह संस्कार हुआ। तत्पश्चात् वह संसार के कार्यों में लीन हो गए। संसार के कार्यों में लीन रहकर श्रीकृष्ण का जीवन बड़ी पवित्रता में रहा, महान रहा। उनके जीवन में कभी अश्लीलता नहीं आई। जिसे आज का मानव अश्लील कह करके उनको अपमानित करता है। आधुनिक काल का व्यक्ति चाहे कुछ भी कहता हो परन्तु उस समय का साहित्य कुछ और ही कहता है। उस समय का साहित्य काल बड़ा विचित्र और महान रहा है। बाल्यकाल से ही उन्होंने नाना प्रकार की विद्याओं का अध्ययन किया।

योगेश्वर श्री कृष्ण जी एक समय गोपियों में विनोद ही करते रहे। विनोद करते करते हुए कई दिवस हो गए। महारानी रुक्मिणी आई, कहा-प्रभु आप क्या कर रहे हैं ?आप इन गोपियों में विनोद करते रहते हैं। आपको राष्ट्र का ध्यान ही नहीं है। भगवान कृष्ण ने कहा- देवी ! यह संसार तो चलता जा रहा है, और चलता चला जाएगा। परन्तु मुझे गोपीका से विनोद करने दो। मुझे आनन्द आता है। जब मैं इनसे विनोद करता हूं तो मेरी अंतरात्मा शक्ति को प्राप्त कर लेती हैं। भगवान कृष्ण जब यह कहा करते हो तो रुक्मिणी मौन हो जाती, और कोई उत्तर नहीं बना तो कहा करती-भगवान् ! भोजन इत्यादि पान करो।

हमारे जीवन में पांच अवगुण होते हैं - काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार। जब यह किसी व्यक्ति के अन्दर आ जाते हैं तो समझो वह सर्प की तरह हो जाता है अर्थात् विषधर हो जाता है सबकी तरफ फुंकारने लगता है । इन्हीं पांचों अवगुणों के ऊपर चढ़ करके अर्थात् उनको वश में करके श्रीकृष्ण जी नाचते हैं ,नृत्य करते हैं। यही नाग मंथन हैं यही नागनाथन है। जो अज्ञानी लोग हैं वह उसका अर्थ कुछ और लगाते हैं अनेक मनगढ़ंत, दृष्टकूट कहानी बनाकर के लोगों में पेश करते हैं। कालीदह पर काले नाग को अपने वश में करके कृष्ण जी को नाचता हुआ दिखाते हैं, वह वास्तविकता से बहुत दूर हैं।

समुद्र कला, पृथ्वी कला, अन्तरिक्ष कला और वायु कला से खाद्य और खनिज पदार्थ उत्पन्न होते हैं। इसी को वर्धन करने के लिए अर्थात् इसमें वृद्धि करने के लिए श्री कृष्ण जी ने प्रयास किया था। इसी से नाना प्रकार की वनस्पतियां उत्पन्न होती हैं। अन्न उत्पन्न होता है। खनिज उत्पन्न होता है। उसका जो प्राणी पान करता है। उसके ऊपर जो अनुसंधानकर्ता है, वह मानव इस पृथ्वी का, गौ का स्वामी बन जाता है । उसके ऊपर उसका आधिपत्य हो जाता है। उसका वह नित्य प्रति वर्धन करता है, यही गोवर्धन है।

अन्ततः निवेदन करना चाहूंगा कि योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण जी के जीवन चरित्र पर लांछन ना लगाएं। उनके वास्तविक गुणों को समझने का प्रयास करें। सारी इंद्रियों को अपने वश में कर लेना और ग्यारहवें मन को अपने वश में कर लेना ही इस संसार रूपी पहाड़ को उठा लेना होता है। यही गोवर्धन है।

इसको वास्तविक स्वरूप में समझने का ज्ञानी पुरुष प्रयास करें। इसी ज्ञान को आगे बढ़ाने का भी प्रयास करें। पाखंड और झूठ का नाश करें। जिससे कि हम योगेश्वर भगवान् श्री कृष्ण जी के वास्तविक गुणों से जानकार हो सके। इस गोवर्धन के महत्त्व को समझे। इसे गोबरधन मत बनाएं। जिसमें गोबर के ढ़ेर की पूजा की और अपने कल्याण की कामना और पुत्रेष्टि यज्ञ माना जाता है। यह गलत है और पाखंड है। ऐसे पाखंड से बचें और सत्य सनातन शाश्वत सत्य को स्वीकार कर अपना तथा सम्पूर्ण विश्व का कल्याण करें।

विशेषः श्री प्राणनाथ जी के तारतम्य ज्ञानानुसार अक्षरारीत परब्रह्म ने ११ वर्ष ५२ दिन तक ब्रज तथा रास में आवेश स्वरुप से लीला की। जब तक परब्रह्म का आवेश स्वरुप लीला कर रहा था तब तक इसको ब्रह्मलीला कहा गया। ११ वर्ष की लीला गोलोकी शक्ति द्वारा भगवान विष्णु द्वारा धारण किया गया तन कृष्ण जी में लीला होती है उसके पश्चात् १२० वर्ष की लीला साक्षात् भगवान् विष्णु द्वारा संपादित होती है। इसको निजानंद दर्शन में ''त्रिधा लीला'' कहां जाता है। अधिक जानकारी हेतु श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी का अवलोकन करें।

उत्तर भारत में जागनी यात्रा का शंखनाद

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा के तत्वावधान में १८ अक्टूबर, २०२५ से शेरपुर की धर्म धरा से श्री राजन स्वामी जी के नेतृत्व में जागनी यात्रा-२ का प्रारंभ हुआ। यह यात्रा उत्तर भारत के विभिन्न स्थानों में लगभग दो माह चलेगी जिसका प्रमुख उद्देश्य तारतम वाणी का प्रचार-प्रसार करना है।

वाणी चर्चा, गायन और आध्यात्मिक प्रश्नोतरी पर केंद्रित यह जागनी यात्रा एक नए अध्याय का सूत्रपात कर रही है।

इस अंक के प्रकाशन तक इस यात्रा के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश राज्य के निम्न स्थानों पर कार्यक्रम आयोजित किए जा चुके हैं-

शेरपुर	बडगांव	रोनी मंगनपुर/ पिपलहेड़ा	टपरी
टाबर	नकुड़	भायला	कुरड़ी
सहारनपुर	यमुनानगर, हरियाणा	सबगा, अम्बाला	बिजलपुर, अम्बाला
नारायणगढ़, पंजाब	रंजीतनगर, पटियाला		

अक्षरातीत धाम धनी इस जागनी यात्रा को सफल बनाएं, और सभी सुन्दरसाथ एकदिली एवं प्रेम भाव से इसमें अपना सहयोग दें, यही हमारी हार्दिक प्रार्थना और कामना है।

१९वां वार्षिक उत्सव : सुंदरसाथ के अनुभव

मेरा श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा के वार्षिकोत्सव में शामिल होने का यह पहला अवसर था। पिछले साल आने की पूरी तैयारी थी परंतु कुछ कारण कारज ऐसा बना की शामिल न हो पाया जिसकी ग्लानि जीवन भर रहेगी। परंतु इस बार जाना पूर्ण रूप से संकल्पित था। १४ तारीख की शाम को ज्ञानपीठ प्रांगण में कदम रखते ही एक सात्विक ऊर्जा सी प्रतीत हुई। इतनी ज्यादा संख्या में सुन्दरसाथ को देख कर १९९७-९८ के रतनपुरी आश्रम की याद आ गई जहाँ सरकार श्री के समय हर प्रांत से हजारों सुन्दरसाथ आता था।

हम ठहरे सेवादार सो लग गए अपनी सेवा खोजने। सेवायें तो एक-दो दिन पहले ही बाँट दी गई थी परंतु सेवा का कोई रूप नहीं होता है ऐसी कोई भी क्रिया जो सुन्दरसाथ के हित में की जाए सेवा ही कहलाती है सो हम कभी रसोई में, कभी पानी के कूलर से जग भरने में, कभी बाथरूम-नाली की सफाई में और जहाँ श्री जी ने हमें अनुकूल समझा हमनें अपनी सेवा प्रदान की। आध्यात्मिक आनंद की शुरुआत भोर की चर्चनी-चितवनी और योग से होती थी। उसके बाद चर्चाओं की मीठी बारिश और मधुर वाणी किरंतन से हृदय सराबोर हो उठता था।

इतनी अधिक संख्या मे सुन्दरसाथ होने के बावजूद अनुशासन और संयम यह संदेश दे रहा था कि यह जनमानस आम नहीं बल्कि खासल ख़ास है। सभी ओर प्रेम की ही खुशबू आ रही थी। ये हमारे प्राणेश की मेहेर ही थी जो सभी कार्य आँधी-तूफ़ान के वावजूद सफल होते चले गये। प्राप्त आनंद को शब्दों में तो लिखा नहीं जा सकता किंतु उसकी अनुभूति हृदय में अमर हो गई है। आख़िर में आरती के समय अनायास ही आँखें भर आई जिसको हमारे आनंद की पराकाष्ठा समझा जाये। पुनः आगमन कि प्रतीक्षा में एक सेवादार।

– आशीष अवस्थी

इस बार का वार्षिक उत्सव सबसे ज्यादा चर्चा में रहा। कारण धाम धनी श्री राज जी के आदेशानुसार श्री प्राणनाथ विश्वविद्यालय की नीव पूजन का कार्य क्रम रहा। दूसरा पितृपथ में विवाह। विभिन्न विद्यालयों से आये विद्यार्थी को स्वामी जी का सम्बोधन। धाम धनी ने चाहा तो आने वाले वर्षो में यह वार्षिक उत्सव निजानंद सम्प्रदाय का सबसे वडा उत्सव माना जायेगा।

– पंकज गुप्ता

सरसावा ज्ञानपीठ में रह कर ऐसा लग रहा था जैसे परमधाम में रह रहे हैं क्योंकि सुबह ५ बजे ध्यान फिर योगा। उसके बाद ६ बजे वाणी गायन व वाणी चर्चा। दोपहर के बाद फिर से ३ बजे वही वाणी गायन व चर्चा। फिर रात को वहीं कार्यक्रम। कुछ फालतू सोचने का समय ही नहीं वही याद आ रहा है।

– बबली शर्मा

केवल दर्शन मात्र से ही नैन ठहर जाते हैं।। ऐसा है प्यारा सरसावा। मात्रा सरसावा कहने से ही दिल पुलकित हो जाता है। खुशी के मारे ना तो वहां नींद आती है ना ही एक पल व्यर्थ करने को दिल चाहता है। चर्चनी, चित्तवनी, वाणी, योग, संगीत में केवल वाणी गायन।

– अनिता अरोड़ा

सरसावा जाकर वापिस आए हुए साथ में से कितने ने व्यसन छोड़ा, कर्मकांड छोड़ा, आडंबर छोड़ा, दिखावा

छोड़ा, वाणी पढ़ना शुरू किया, मंथन करना शुरू किया, सच बोलना शुरू किया, हर समय ईमानदारी से जीना शुरू किया, जो भी क्षेत्र में है उसको वफादारी ईमानदारी सच से ही पालन करना शुरू किया, माफ कीजिएगा अगर सरसावा जाकर वापिस आने के बाद भी अगर इन बातों से जीवन नही जीते हैं तो समझो व्यर्थ ही समय गवाया है।

- विनोद श्रीमाली

बहुत आनंद आया। दिन कैसे बीता पता ही नहीं चला। स्वामी जी सभी सुंदरसाथ को ब्रह्मानंद दे रहे थे। सबकी याद आ रही है। सभी के चरणों में कोटि-कोटि प्रणाम।

- पी.सी. प्रकाश

बहुत अच्छा लग रहा है रिकार्डिंग प्रोग्राम को बार-बार देख कर याद कर रहे हैं। पूरा दिन वहीं का प्रोग्राम सुनते रहते हैं। लगता है हम वहीं बैठे सुन रहें हैं।

- सरोज रानी

बहुत ही सुन्दर चर्चा का लाभ मिला और सुंदरसाथ के दर्शन मिले। सभी आत्माओं के चरणों में प्रणाम।

- योगेश गांधी

सुबह से रात्रि तक राज जी की ही बातें स ध्यान, योग, वाणी गायन, वाणी चर्चा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं स प्रेम, सेवा और समर्पण सभी सुन्दरसाथ में, लगता जैसे धाम चलने की पूरी तैयारी में हैं। सबकी डोर राज जी ने स्वामी जी के हाथों में थमा दी है। प्रेम प्रणाम जी।

- डी.पी. सिंह

Serenity of the place, love in the air,

Discipline during programs, simple delicious food made by

Sundersath with love and devotion,

attendance and pravachans of our esteemed guests from Panna dham,

and above all sadgi and bright aura

of Swamiji... all these made our 7 days stay at Sarsawa memorable.

- Anita Malik

पूरे साल के लिए बैटरी चार्ज हो गई।

- योगेश पंड्या

सरसावा में तो प्रेममयी ज्ञान की वर्षा होती है। मारिफ़त का ज्ञान राज जी के दिल की इच्छा हुक्म की पहचान करवाई जाती है। उस सुख का बयान करना हमारे जीव में समर्थ नहीं है। ये तो अन्तर्रात्मा से अहसास करने वाला सुख स्वामी जी से मिलता है। प्रेम प्रणाम जी।

- मिथिलेश शर्मा

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की **C.B.S. A/C** संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

1. खाताधारक का नाम – श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट खाता संख्या – 3290805513	
2. खाताधारक का नाम – श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, पन्ना खाता संख्या – 3759122888,	
सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया, पता : शाखा–सरसावा, सहारनपुर, उ.प्र. – 247232 MICR Code - 241016005 IFSC Code - CBIN0282531	**सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया,** पता : शाखा – पन्ना IFSC Code CBIN0282158

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निर्माण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन– 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ,
सरसावा से प्रकाशित साहित्य की सूची

क्र. सं.	ग्रन्थ का नाम	न्योछावर
01	श्री कुलजम स्वरूप	550
02	श्री बीतक साहिब टीका	400
03	बीतक चर्चा	350
04	रास ग्रन्थ टीका	180
05	प्रकाश ग्रन्थ टीका	400
06	खटरूती ग्रन्थ टीका	100
07	कलश ग्रन्थ टीका	230
08	सनन्ध ग्रन्थ टीका	300
09	किरन्तन ग्रन्थ टीका	300
10	खुलासा ग्रन्थ टीका	250
11	खिलवत ग्रन्थ टीका	250
12	परिक्रमा ग्रन्थ टीका	330
13	सागर ग्रन्थ टीका	230
14	सिनगार ग्रन्थ टीका	400
15	सिन्धी ग्रन्थ टीका	100
16	मारफत सागर ग्रन्थ टीका	180
17	कयामतनामा ग्रन्थ टीका	160
18	किरन्तन (अंग्रेजी में) ग्रन्थ टीका	350
19	किरन्तन (नेपाली में) ग्रन्थ टीका	300
20	परमधाम पट्दर्शन	650
21	परमधाम पट्दर्शन (गत्तेवाली)	700
22	पुराण संहिता	200
23	विद्वद्दमनी	200
24	कलश टीका (नेपाली में)	150
25	भ्रान्ति नाशनम्	80
26	श्री मुखवाणी संगीत (छोटी)	70
27	खाद्य परिशीलन	250
28	निजधाम दर्शन	150
29	रूपान्तरण (युगलदास जी–बड़ी वृत्त)	100
30	आर्ष ज्योति	120
31	चितवनि रहस्य	80
32	तारतम पीयूषम्	70
33	तारतम के निर्झर	70
34	ध्यान की पुष्पांजलि	70
35	सत्यांजलि	80
36	मूल स्वरूप की ओर	80
37	चितवनी महिमा	80
38	हमारी रहनी	50
39	प्रेम का चाँद	80
40	दोपहर का सूरज	80
41	महजरनामा	80
42	नित्य पाठ (बड़ी)	30
43	मांसाहार (विनाश का पर्याय)	80
44	ब्रह्मवाणी चर्चा	65
45	हमारी शाश्वत सम्पदा	60
46	निजानन्द योग (बड़ी)	70
47	झूठ ही झूठ	60
48	कड़वे सच	50
49	ज्ञान मन्थन	50
50	विराट–नक्शा (कैलेण्डर रूप में)	50
51	संस्कार पद्धति	70
52	गागर में सागर	50
53	प्राणनाथ महिमा (नई)	40
54	बीतक से शिक्षा	40
55	ब्रह्माण्ड रहस्य	60
56	स्वास्थ्य के प्रहरी	40
57	तमस् के पार (बड़ी)	40
58	शब्दातीत शब्दों में	50
59	सेवा पूजा	30
60	ज्ञान मंजूषा	30
61	यथार्थ दीपिका	30
62	भागवत यथार्थम्	30
63	निजानन्द चित्र कथा	30
64	तमस् के पार (छोटी)	20
65	निजानन्द योग (छोटी)	20
66	अन्धकार देखि पारि / नेपाली	70 / 110
67	संसार से परमधाम की ओर	20
68	सत्य को बाटो (नेपाली में)	15
69	बोध मंजरी (हिन्दी)	15
70	बोध मंजरी (उड़िया)	15
71	चितवनी मार्ग दर्शन	10
72	चितवनी	10
73	नित्य पाठ	10
74	तारतम्य सुधा (भाग–1)	60
75	तारतम्य सुधा (भाग–2)	60
76	शाश्वत सत्य की ओर	10
77	सुबोध बाल बीतक	150
78	प्रश्न माला	5
79	मीर जी शेख जी का बयान	20
80	सोवं कयामतनामा (तीसरा कयामतनामा)	90
81	बुलन्द मुकदमा	40
82	हयातुनबी	40
83	मुख्तारे–हिन्द	20
84	अफलातूनी इलम	20
85	शब–ए–मेयराज	15
86	Food For Thought	250
87	Mystic Universe	80
88	Descent of the Absolute Divine	80
89	Get Introduced to Nijanand School	120
90	Darkness to Brightness	60
91	Chess of Mystic Spiritual Knowledge	25
92	Pearls of Spiritual Wisdom	30
93	Nijanand Meditation	60
	निजानन्द योग अंग्रेजी (बड़ी)	
94	परमधाम विलास	60
95	Supreme Truth God	30
96	वर्णाश्रम	70
97	जागनी सुधा (भाग–1)	80
98	जागनी सुधा (भाग–2)	80
99	जागनी सुधा (भाग–3)	90
100	गीतादर्शनम्	60
101	सौन्दर्य–सिन्धु (भाग–1)	70
102	सौन्दर्य–सिन्धु (भाग–2)	80
103	जातिवाद	30
104	Shri Nijanand Swami	100
105	Elixir of Enlightenment	30

प्रकाशन कार्यालय

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड, सरसावा, जिला सहारनपुर-247232 (उ.प्र)

मोबाइल नं: 7088120381

सेवा में

बुक पोस्ट

RNI: UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18/2025-27